तिरुमल तिरुपति देवस्थान

सप्तगिरि

सचित्र मासिक पत्रिका

जनवरी-2021

रु.5/-

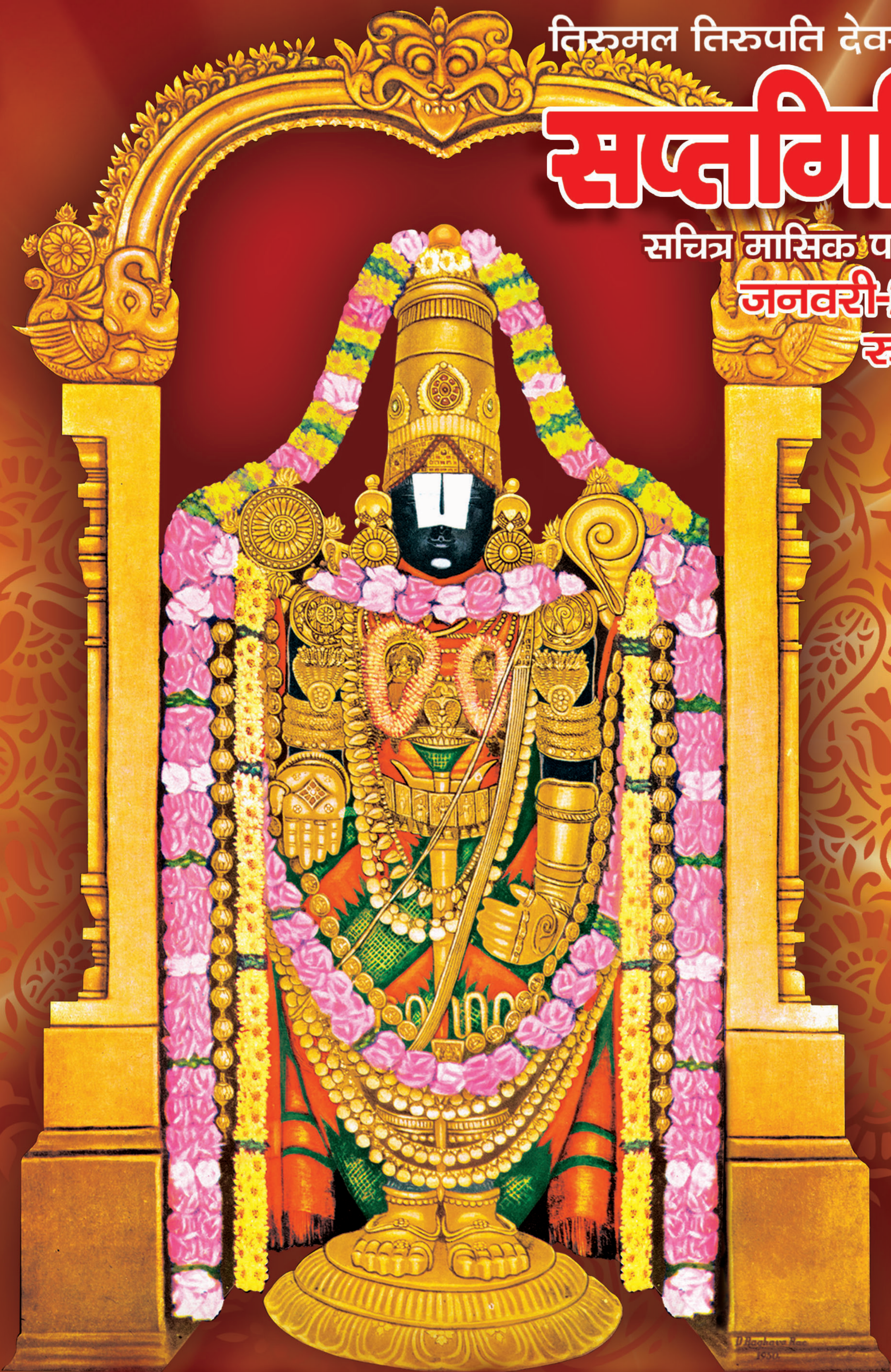

"श्री वेंकटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये"

तिरुमला में ३०-१२-२०20 पर वैभवपूर्ण संपन्न स्वामीजी का प्रणय कलह उत्सव

तिरुमला में २५-१२-२०२० पर वैकुंठ एकादशी के संदर्भ में स्वामीजी का स्वर्ण रथोत्सव

तिरुमला में २६-१२-२०२० पर शास्त्रोक्त ढंग से संपन्न वैकुंठद्वादशी चक्रस्नान

तिरुपति श्रीगोविंदराजस्वामीजी के सोने के आभरणों को ३०-१२-२०२० पर तिरुपति संयुक्त कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री पी.बसंतकुमार, आई.ए.एस., जी को समर्पित श्रीश्रीश्री बडे-जीयरस्वामीजी

दिल्ली श्रीवारि आलय को 'मंदिर को एक गोमाता' की योजना में गाय-बछड़े को २९-१२-२०२० बहूकरित ति.ति.दे. के अध्यक्ष और कार्यनिर्वहणाधिकारी

द्रुपदो द्रौपदेयाश्च सर्वशः पृथिवीपते।
सौभद्रश्च महाबाहुः शङ्खान्दध्मुः पृथक्पृथक्।।
(- श्रीमद्भगवद्गीता १-१८)

राजा द्रुपद एवं द्रौपदी के पाँचों पुत्र और बडे भुजावाले सुभद्रापुत्र अभिमन्यु-इन सभी ने, हे राजन्! सब ओर से अलग-अलग शङ्ख बजाये।

गीताध्ययन शीलस्य प्राणायाम परस्य च।
नैव सन्तिहि पापानि पूर्वजन्म कृतानि च।।
(- गीता मकरंद, गीता की प्रशस्ति)

जो गीता का अध्ययन करेगा, जो प्रणायाम करेगा उसके पूर्व जन्म के सभी पाप नष्ट हो जाएंगे।

तिरुपति एवं उसके आसपास के दर्शनीय क्षेत्र

श्री गोविंदराज स्वामी मंदिर : आंध्रप्रदेश के चित्तूर जिले में तिरुमल पर्वत के पदभाग में तिरुपति स्थित है। वैष्णवधर्म के प्रवर्तक श्री रामानुज से संबंध रखनेवाला यह पुरातन शहर है। ११३० ए.डि. में प्रख्यात वैष्णवधर्म के प्रवर्तक श्री रामानुज ने श्री गोविंदराज स्वामी-मंदिर का निर्माण कर, परिसर के छोटे प्रांत को आवास योग्य बनाकर, उसे 'तिरुपति' का नाम रखा। पुराणों के अनुसार, यहाँ के मूर्ति की वैष्णव सम्प्रदाय के प्रवर्तक एवं महान आचार्य श्री रामानुज ने प्रतिष्ठा की। भगवान तो शयन मुद्रा में है। इस प्रांगण में श्री आण्डाल, श्री पार्थसारथी एवं श्री वेंकटेश्वरस्वामी के मंदिर हैं।

श्री कोदंडराम स्वामी मंदिर : तिरुपति रेल्वेस्टेशन से एक कि.मी. दूरी पर श्रीराम का मंदिर है। लंका से वापस आते वक्त सीता लक्ष्मण सहित श्रीराम के तिरुपति आगमन के स्मरण में इस मंदिर का निर्माण किया गया है। शिलालेख के आधार से १५वीं शताब्दी में सालुव नरसिंह के अभ्युदय के लिए नरसिंह मोदलियार नामक व्यक्ति ने इस मंदिर का निर्माण किया।

श्री कपिलेश्वर स्वामी मंदिर : तिरुपति से तीन कि.मी. दूरी पर भगवान शिव का मंदिर है। कपिल महर्षि द्वारा प्रतिष्ठापित होने के कारण भगवान को कपिलेश्वर और तीर्थ को कपिलतीर्थम् का नाम प्रचलित हो गया है।

अलमेलुमंगापुरम् (तिरुचानूर) : तिरुपति से ५ किलोमीटर की दूरी पर यह मंदिर स्थित है। श्री वेंकटेश्वरस्वामी की पत्नी श्री पद्मावती देवी का मंदिर है। कहा जाता है कि तिरुचानूर में विराजमान श्री पद्मावती देवी के दर्शन के बाद ही तिरुमल-यात्रा की सफलता प्राप्त होगी। श्री पद्मावती देवी मंदिर की पुष्करिणी को 'पद्मसरोवर' कहा जाता है। पुराणों के अनुसार भगवती देवी ने इस पुष्करिणी के स्वर्णपद्म में स्वयं अवतार लिया है।

श्रीनिवासमंगापुरम् : तिरुपति से १२ किलोमीटर की दूरी पर यह मंदिर स्थित है। ग्राम की आग्नेय दिशा में श्री कल्याण वेंकटेश्वरस्वामी का मंदिर है। पुराणों में कहा गया है कि श्री वेंकटेश्वरस्वामी ने श्री पद्मावती देवी से विवाह करने के बाद तिरुमल जाने के पूर्व कुछ समय तक इस क्षेत्र में ठहरे। १६वीं शती में ताल्लपाक चिन्न तिरुवेंगडनाथ ने इस मंदिर का जीर्णोद्धारण किया।

नारायणवनम् : तिरुपति से लगभग २२ किलोमीटर की दूरी पर आग्नेय दिशा में स्थित मंदिर में श्री कल्याण वेंकटेश्वरस्वामी विराजमान हैं। इसी पवित्र क्षेत्र में आकाशराजा की पुत्री श्री पद्मावती देवी एवं श्री वेंकटेश्वरस्वामी का विवाह सम्पन्न हुआ था। इस महान घटना की याद में आकाशराजा ने इस मंदिर का निर्माण करवाया।

नागलापुरम् : इस मंदिर में श्री वेदनारायण स्वामी विराजमान हैं। तिरुपति से लगभग ६५ कि.मी. दूरी पर आग्नेय दिशा में यह मंदिर स्थित है। विजयनगर शैली को प्रतिबिंबित करनेवाली यह सुन्दर नमूना है। गर्भगृह में दोनों ओर श्रीदेवी व भूदेवी सहित मत्स्यावतार रूपी श्री विष्णु की मूर्ति विराजमान है। मंदिर की विशिष्टता का प्रमुख कारण है, सूर्याराधना। हर वर्ष मार्च महीने में सूर्य की किरणें तीन दिन तक गोपुर से होती हुई गर्भगृह में स्थित मूर्ति को स्पर्श करती हैं। इसे सूर्य द्वारा भगवान की आराधना मानी जाती है। विजयनगर सम्राट श्रीकृष्णदेवराय ने अपनी माता के अनुरोध पर इस मंदिर का निर्माण कराया।

अप्पलायगुंटा : अप्पलायगुंटा में श्री प्रसन्नवेंकटेश्वरस्वामी का मंदिर है। तिरुपति से १५ कि.मी. दूरी पर स्थित है। ब्रह्मोत्सव तथा प्लवोत्सव आदि बडे पैमाने पर मनाया जाता है। इस प्राचीन मंदिर में श्री पद्मावती देवी एवं आंडाल की मूर्तियाँ विराजमान हैं। कार्वेटिनगरम् के राजाओं से निर्मित इस मंदिर के सामने श्री आंजनेय स्वामी की मूर्ति है। दीर्घकालीन व्याधियों के निवारण के लिए यहाँ विराजमान श्री आंजनेय स्वामी की भक्तों द्वारा पूजार्चना की जाती है।

कार्वेटिनगरम् : तिरुपति से ५८ कि.मी. की दूरी पर पुत्तूर के निकट यह मंदिर स्थित है। रुक्मिणी, सत्यभामा सहित श्री वेणुगोपाल स्वामी के दर्शन कर सकते हैं। प्राचीन काल में नारायणवनम् के राजाओं ने इसका निर्वहण किया। हनुमत्समेत श्री सीताराम व लक्ष्मण की एकशिला मूर्ति इस मंदिर में विराजमान हैं।

सप्तगिरि

तिरुमल तिरुपति देवस्थान की सचित्र मासिक पत्रिका

वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन।
वेङ्कटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति॥

वर्ष-५१ जनवरी-२०२१ अंक-०८

विषयसूची

दक्षिण भारत की संक्रान्ति	श्रीमती पी.सुजाता	07
तोंडरडिप्पोडि आळ्वार (श्री भक्तांघ्रिरेणु स्वामीजी)	श्री नरसिंग खेमका	12
भोगी, पोंगल और संक्रांति पर्व	श्री ज्योतीन्द्र के.अजवालिया	16
श्रीमहापूर्ण स्वामीजी (श्रीपेरिय नम्बि)	श्री कृष्ण कुमार गुप्त	19
श्री गोविंदाचार्य स्वामीजी (एम्बार)	श्रीमती अनिता रमाकांत.दरक	21
श्री भक्तिसार स्वामीजी	श्रीमती शंकुंतला उपाध्याय	24
विष्णुसहस्त्रनाम का महत्व	डॉ.के.सुधाकर राव	31
श्री रामानुज नूट्रन्दादि	श्री श्रीराम मालपाणी	35
शरणागति मीमांसा	श्री कमलकिशोर हि. तापडिया	36
भागवत कथा सागर त्रिपुरासुर का संहार	श्री पी.वी.एस.प्रसाद	38
श्री प्रपन्नामृतम्	श्री रघुनाथदास रान्दड	40
हरिदास वाङ्मय में श्रीवेंकटाचलाधीश	डॉ.एम.आर.राजेश्वरी	42
गीता-संस्कृति में आगे कदम	श्री टि.वेंकटेश्वर्लु	44
श्री वेंकटेश सुप्रभात	श्री यू.वी.पी.बी.श्रीनिवासाचार्यजी	46
आइये, संस्कृत सीखेंगे...!!	डॉ.सी.आदिलक्ष्मी	49
बालनीति- अतिथि सत्कार-एक पुण्य कार्य	श्री सी.सुधाकर रेड्डी	50
चित्रकथा- श्री गोदा कल्याण	डॉ.एम.आर.राजेश्वरी	52
क्विज	डॉ.जी.मोहन नायुडु	54

गौरव संपादक
डॉ.के.एस.जवहर रेड्डी, आई.ए.एस.,
कार्यनिर्वहणाधिकारी, ति.ति.दे.

प्रधान संपादक
आचार्य के.राजगोपालन्

संपादक
डॉ.वी.जी.चोक्कलिंगम्

मुद्रक
श्री पी.रामराजु
विशेष अधिकारी,
(प्रचुरण व मुद्रणालय),
ति.ति.दे. मुद्रणालय, तिरुपति।

स्थिरचित्र
श्री पी.एन.शेखर, छायाचित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।
श्री बी.वेंकटरमण, सहायक चित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।

जीवन चंदा .. रु.500-00
वार्षिक चंदा .. रु.60-00
एक प्रति .. रु.05-00
विदेशी वार्षिक चंदा .. रु.850-00

अन्य विवरण के लिए:
CHIEF EDITOR, SAPTHAGIRI, TIRUPATI - 517 507.
Ph.0877-2264543, 2264359, Editor - 2264360.

website: www.tirumala.org or www.tirupati.org वेबसैट के द्वारा सप्तगिरि पढ़ने की सुविधा पाठकों को दी जाती है। सूचना, सुझाव, शिकायतों के लिए - sapthagiri_helpdesk@tirumala.org

मुखचित्र - श्री वेंकटेश्वर स्वामी (मूल विराट), तिरुमला
चौथा कवर पृष्ठ - श्री पद्मावती देवी (मूल विराट), तिरुचानूर

सूचना
मुद्रित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखक के हैं। उनके लिए हम जिम्मेदार नहीं हैं।
- प्रधान संपादक

संपादकीय

पुष्यमास की शोभा

भारत-उपखंड में पुष्यमास एक विलक्षणकारी मास है, जो षड्ऋतुओं में एक अनोखा बदलाव लाता है। पुष्यमास कर्षकों का मास है। फसलों का मास है। कर्षकों, फसलों, धानों तथा खेत-खलिहानों में इस मास के दौरान काफी हलचल दिखाई देता है, जो एक मधुरमय दृश्यमान के तौर पर जनमानस के हृदय-पटल पर अंकित हो जाता है!!

पुष्यमास का दौर हेमंतऋतु में पड़ जाने से ठंडक की कोई कमी नहीं रहेगी। सुबह-शाम लोग धूप की छाँह में अपने को सेंकते रहते होते!! सुबह ९-१० बजों तक, फिर शाम चार बजे से हिमपात के परदे में प्रकृति-कन्या सिहरती-बलखाती हुई होती!

किसानों के लिए यह माह हर्षोल्लासों का होता है, क्योंकि उनके घर सब धान की बोरियों से लदे हुए होते!!

पुष्यमास में ही सूरज का धनुष-राशि से ''मकर'' राशि में संक्रमण होयेगा! अतत्व, पुष्यमास में दक्षिणी भारत के अंदर ''संक्रांति'' नाम का महापर्व पड़ जायेगा, जो ''बड़ा त्योहार'' नाम से आन्ध्रप्रांत और ''पोंगल'' नाम से द्राविड़-प्रांत में बड़े उमंग, हर्षोल्लास तथा बहुत ही सजग वातावरण में मनाया जाता है। दक्षिण भारत में संक्रंति बहुत ही आनंदमयपर्व है। संक्रांति-त्योहार पाँच दिन तक मनाये जाने वाला बड़ा पर्व है, यथा- १)भोगि, २)संक्रांति, ३)पारण, ४)पशुओं का त्योहार, ५) पितरों का तर्पण।

तिरुमल-तिरुपति देवस्थान वालों ने गाय को पूजनीय सम्मान करने का निश्चय किया है। गऊमाता में ब्रह्म-रुद्र-विष्ण आदि तीन मूर्तियों के साथ-साथ समस्त देवताओं का आवास होता है। गाय का दूध साक्षात् अमृत है और गाय से ही अप्रतिमान ''पंचगव्यों'' का प्रसाधन बनाया जाता है, जो हिन्दुओं की पूजा-विधि में काफी कुछ महत्व रखते हैं।

इस प्रकार, गाय की मानवालि की पवित्रता एवं उपयोगिता की मात्रा को दृष्टि में रखते हुए तिरुमल-तिरुपति देवस्थान की पालक-मंडली ने एक-एक देवस्थान को एक-एक गाय पुरस्कार में देने का निश्चय किया है! अत्यंत यह सराहनीय कार्यक्रम हो कर रहने में कोई संदेह नहीं है!!

पूस के अनंतर माघमास आयेगा। क्रमेणा ऋतु बदलेगा। मौसम में काफी कुछ परिवर्त्तन आयेगा। फागुन से हिन्दू-कैलेंडर की समाप्ति होगी; मधुमास (वंसती) की नींव पड़ेगी; फिर चैत्रमास की जैत्रयात्रा से पुनः नये साल का प्रारंभ हो जायेगा और लोगों के लिए बडे पैमाने पर शुभवार्त्ता लेकर आयेगा! बस, हमें निरीक्षण करते जाना ही कर्त्तव्य है। अस्तु!

शुभम्!!

भारत पर्वों का देश है। पवित्र हिन्दू-धर्म ही एक पर्व है। यहाँ हर अमावास्या और पूर्णिमा त्योहार समझ कर मनाये जाते हैं। हिन्दुओं के लिए १०१ पर्व दिन सालीना जीवन-यान में हर्षोल्लास भर कर जाते हैं।

त्योहार मानव जीवन में मधुरमय पड़ाव हैं। ये जीवन की नीरसता दूर करके मनुष्य को पुनरुत्तेजित कर छोड़ते हैं। संघजीवी मनुष्यों को एकीकृत कर, एक सूत्र में बाँधकर और समाज की सुकृति की ओर यात्रा कराने वाले त्योहारों की प्रयोजनकारिता काफी विस्तार है!!

भारत के कुछ पर्व भूतकालिक कुछ महत्तर घटनाओं की याद में मनाये जाते हैं। कुछ त्योहार भगवान के प्रति कृतज्ञतापूर्वक मनाये जाते हैं, तो रामनवमी, कृष्णजयंती आदि पर्व गतकाल के गुरुतर व्यक्तियों की याद में प्रीतिपूर्वक मनाते हैं। ऐसे कुछ त्योहार हैं, जो इस सांप्रदायिक वतन में कई हजारों सालों से लोगों-द्वारा भक्ति-श्रद्धाओं के साथ मानाये जा रहे हैं।

भारतवासी अत्यंत सुंदर और मनोहारिक तथा आह्लादपूर्ण प्रकृति व वातावरण के बीच वास करता है। हर भारत के नागरिक को प्रकृति पर काफी आदरपूर्ण कृतज्ञता का होना अत्यंत सहज एवं स्वाभाविक है। हिन्दुस्तान का हर नागरिक महान प्रकृति-प्रेमी है। प्रकृति में संभवित हर बदलाव व पहलू से हिन्दुस्तान में ताल्लुकात रखते हैं। भारत के किसान, जो प्राकृतिक परिवर्त्तनों के पहलुओं को आधारभूत मान कर खेती करने पर सिद्धहस्त हैं, वे महान् प्रकृति के प्रेमी और उपासक हैं।

हिन्दुस्तान में प्रकृति की काफी कदर की जाती है। यहाँ समय-समय पर संपन्न प्राकृतिक घटनाओं या परिवर्तनों का पूजन होता है। यहाँ प्रकृति की आराधना के तौर पर भी त्योहार मनाये जाते हैं। भारत में, खास कर दक्षिण भारत में प्रकृति-संबन्धी त्योहारों में ''संक्रांति'' एक बड़ा पर्व है।

दक्षिण भारत की संक्रान्ति

- श्रीमती पी सुजाता
मोबाइल - ९४४१२५४०६१

संक्रान्ति को वह नाम क्यों?

भूम्यादि ग्रह-मंडल के प्रधानाधिकारी सूरज ही तो है। बिना सूरज के भूमि नामक ग्रह का अस्थित्व ही नामुमकिन है। भूमंडल पर समस्त प्राणिकोटि की आधारभूत शक्ति सूरज है। सूरज शक्ति का अप्रतिमान पुंजा व कुंज है। सूरज है, तो हम हैं और बिन सूरज का सब सूना है।

सूरज के आते ही या उगते ही समस्त प्रकृति जाग जाती है। समस्त प्रकृति में जागरण व्याप्त होता है। समस्त प्राणिकोटि में हर्षोल्लास-रूपी चैतन्य उग आता है और सब प्राणी अपने दैनंदिन क्रिया-कलापों में व्यस्त हो जाते हैं। इसी को जीवन-यान मानते हैं और प्राणियों के जीवन-यान का आधार-बिन्दु सूर्य है। अर्थात् इस ग्रह-मंडल की व्यवस्था का संचालक सूर्य है। इस कठोर वास्तविकता को मद्देनजर रखते हुए, नानाविध खंडों में अनादि से मनुष्यों ने सूरज को भगवान् माना था। हाँ, सूरज मनुष्यों का सर्व प्रथम भगवान है, जिसकी पूजा-अर्चना अनेक खंडों के देशों में हुआ करती थी!!

सूरज ज्योतिषशास्त्र का भी मूल केंद्र है। मेष आदि राशि-मंडलों में रवि आदि ग्रह-मंडलों का संचार ही ''ज्योतिष शास्त्र'' कहलाता है। यह अनादि के मानव-संघों में साफ जाहिर है कि भूमंडल के मनुष्यों पर आसमान में चमकते नक्षत्रों का काफी असर पड़ता है। मानव इस बात पर ज्यादा ध्यान देता नहीं, मगर जाने-अनजाने में इस भूग्रह पर स्थित सब मनुष्यों व प्राणियों पर आसमाँ के तारों का स्पष्ट प्रभाव होता है। आसमाँ के ग्रहमंडलों से प्रकटित व विमुक्त बलीय कांति-रेखाओं तथा चुंबकीय बलरेखाओं के कारण मानव-मस्तिष्क प्रतिस्पंदित होता रहता है। इसी बलपूर्वक विचार से ही हिन्दुओं, ग्रीकों, यवनों के खगोल वैज्ञानिकों ने ''ज्योतिष शास्त्र'' का आविष्कार किया था। ज्योतिषशास्त्र का आविर्भाव हजारों सालों के पूर्व हुआ था!! ज्योतिषशास्त्र का अर्थ ही कांति से सबन्धित शास्त्र है।

अतः सूर्य मंडल का प्रधान गुरु सूरजभगवान है। इस कारण सूरज ही ज्योतिष व प्राकृतिक शास्त्र का प्रधान सूत्र है। सूरज के भ्रमण से ही भरतवर्ष में ऋतुओं का परिवर्त्तन होता है। भारत में छः ऋतुओं की गणना होती है, यथा-वसंत, ग्रीष्म, वर्षा, शरत, हेमंत, शिशिर। एक साल में बारह राशियों का घटन होता है, जिन राशियों के अंतर्गत सूरज भगवान का संचार दो-दो महीने होता है। अर्थात् इन राशि-मंडलों में सूरज की बलीय कांति का प्रवेश हो करके, दो महीनों तक वह कांति-प्रसारण स्थिर रूप से चलता है।

इस प्रकार मेष आदि राशि-मंडलों में सूर्य का संक्रमण समय-समय पर होता रहता है। संक्रमण का अर्थ आवेश व प्रवेश होता है!!

एक-एक राशि-मंडल में सूरज का प्रवेश साल-भर में एक-एक समय पर होता रहता है। उदारहण के तौर पर सूरज धनुष-राशि में दिसंबर-१६ वीं तारीख पर संक्रमण व आक्रमण या प्रवेश या आवेश होता है। इस प्रकार धनूराशि में प्रवेशित सूर्य उसी राशि में जनवरी-१२ वीं तारीख तक अपना प्रकाश बिखेरता रहता है। इसलिए धनूराशि में सूर्य के इस संक्रमण को ''धनुर्मास'' कहते हैं।

ठीक इसी प्रकार सूर्य धनूराशि से जनवरी-१२ वीं तारीख को निकल कर धनूराशि की अव्वल वाली राशि ''मकरराशि'' में जनवरी, १३ वीं तिथि पर प्रवेश करता है, जो ''मकर-संक्रांति'' के नाम से पुकारा जाता है!! मकर- संक्रांति का अर्थ सूरज का मकरराशि में प्रवेश करना होता है!! मकर-संक्रांति इतना विख्यात दक्षिण भारत में कि खाली ''संक्रान्ति'' के नाम से भी वह झट पहचाना जाता है!! मकर शब्द के लोप से भी वह काफी विख्यात हो उभर आया हुआ है!!

संक्रांति पर प्रकृति की शोभा

संक्रांति पक्की हेमंत ऋतु की ठंडाई पर चलती है। २०१९ की संक्रांति १४.०१.२०१९ पर रात ०१.२८

मिनटों पर होगी। तब अश्वनी नामक नक्षत्र चलता होगा। तुला लग्न का शुभ समय होगा। संक्रमण इस साल सोमवार पर होता है।

ठंडाई का जोर रहता है। आसमाँ से सुबह-शाम बरफ गिरेगा। कोहरा छाया हुआ होगा। सूरज से धरती की काफी दूरी रहने के कारण, सूरज की किरणों की तीव्रता या उष्णता काफी कम रहेगी। दिन की उष्णता बहुत घट कर सहिष्ण बन कर होगी। शिशिर ऋतु में पेड़ों के पत्ते झड़ गये होंगे, सो हेमंत ऋतु में उग आना शुरू करेंगे!! प्रकृति में पतझड़ का असर अंत होता हुआ दिखाई देगा।

हेमंत ऋतु वसंतऋतु का आधारभूत ऋतु है। हेमंत में से ही बसंत का जनम होता है। अर्थात् संक्रांति पर्व पतझड़ और वसंत ऋतुओं का मध्यवर्ती होता है, जो पतझड़ को अल्विदा कह कर, बसंतीशोभा का स्वागत करता है। मतलब संक्रांति हरियाली को लिवा लाकर, समस्त प्रकृति में नयी सजगता का सृजन करता है!!

खेत-खलिहानों में किसानों की हल-चल कम पड़ जाती है। वर्षा ऋतु के अंत से फसलों में परिपक्वता आ जाती है और शिशिर में फसलों का फलन होता है। किसान शिशिर में पकी फसलों की कटाई करता है। शिशिर के अंत तक किसान भाई फसलों को काट कर, अनाज से घर भर देता है।

खास तौर पर संक्रांति किसानों के लिए बेहद आनंददायक त्योहार माना जाता है। संक्रान्ति मुख्यतया त्योहार नहीं, एक हल-चल है। वह एक खुशियों की लहर है, जो खेत-खलिहानों की भरपूर देन से उसी हर्षोल्लास की उमंग है!!

संक्रांति के पर्व दिन पर

संक्रान्ति के पर्व दिन पर समस्त प्रकृति में क्रांति ही क्रांति देखने को मिलती है। सूर्यास्त के होते ही आसमान से सफेद धुआँ-सा बर्फ गिरना आरंभ होयेगा। सर्दी की गिरफ्त में समस्त प्राणि-कोटि जकड़ी हुई होगी।

यदार्थ में, संक्रान्ति अगहन (मार्गशीर्ष) की शुद्ध नवमी-दशमी अथवा दिसंबर, १६ वीं तारीख से आरंभ हो जाती है। संक्रान्ति का साक्षात्कार या उपस्थिति पुष्य-मास (पूस) की शुद्ध अष्टमी-नवमी अर्थात् जनवरी, १३-१४ तारीखों तक होती है।

संक्रान्ति का दिव्य व सुचारु दर्शन दक्षिण के ग्रामीण वातावरण में अत्यंत मनोहारी ढंग से होता है। महिलाओं में संक्रान्ति का उमंग छाया हुआ होता है। भले ही बाहर कड़ाके की सर्दी क्यों न पड़ती हो, मगर दक्षिण की हर महिलाशिरोमणि प्रभात में नींद से जागती है और गाय के गोबर को पानी में मिला कर घर के आंगन में छिड़कती है, जिस के बीचों बीच मनोहरी रंगोली का चित्रण करती है। उस सुंदर तथा परम मनोहारी रंगोली के बीच गोबर के कवले की स्थापना कर, उस कवले पर घास के एक टुकड़े को खोंसती है, जो गौरी माता का प्रतीक माना जाता है!! उस समय कद्दू-पेठे की फसल का मौसम होगा। प्रायः पहुँच में होने पर, रंगोली के बीचों बीच स्थापित गाय के गोबर के कवले के सिर पर कद्दू या पेठे के लाल-लाल रंगीले पुष्प का अलंकरण करना भी एक खास रिवाज़ है!!

इस प्रकार हर रोज रंगोली का चित्रण और उसके मध्य में गोबर-गौरी का स्थापन होता रहेगा। यह पूर्णतया मासांत तक चलता है। सुबह रंगोली में स्थापित गोबर-गौरी का कवला शाम तक सूख कर पिडका (सूखा गोबर) बन जायेगा, जिसे एक जगह संचित कर जतन से रखा जायेगा।

वैसे संक्रांति पर्व पाँच दिन मनाते हैं, यथा- (१)भोगी, (२)संक्रांति (३)पारण (४)पशुवों का उत्सव, (५)पितृदेवता-तर्पण।

१) भोगि :- भोगि संक्रान्ति के पूर्व का दिन है। यह धनुर्मास का आखिरी दिन होता है। संक्रांति के प्रवेश का जश्न इस दिन मनाया जाता है। घर-घर प्रातः ही बड़े-बड़े हाँडों में पानी गर्म किया जाता है, जिस गर्मागरम पानी में पूरे परिवार का स्नान हो जाता है और हर हालत में सभी परिवार के सदस्य नूतन वस्त्र पहनते हैं।

दक्षिण के पाँचों राज्यों-आन्ध्र, तेलंगाना, कर्नाटक, तामिलनाडू और केरल में हर परिवार, संक्रांति के प्राकृतिक पावन पर्व पर हर हालत में, नये कपड़ों की खरीददारी करता हैं।

भोगि शुभ अवसर पर निश्चयपूर्वक माँसाहारी भोजन पर लोग तुले हो जाते हैं। कुछ ब्राह्मण आदि परिवारों को छोड़ कर, इन पाँचों राज्यों में प्रायः शाखाहारी भोजन न परोसा जायेगा!!

२) संक्रांति पर्व दिन पर :- संक्रान्ति पावन पर्व पर भी तड़के के मंगल शिरो-स्नान से लोगों के सारे पाप धुल जायेंगे। लोग नये कपड़े पहन कर हर्षोल्लास और नयी उमंग के साथ घर में ''पोंगली'' की तैयारी में लग जाते हैं।

दिन के पहली पहर में हर घर में पोंगली तैयार किया जाता है।

घर के आंगन में एक बड़ा चूल्हा जला दिया जाता है, जिस पर एक नया घड़ा या बर्तन रखा जाता है। बर्तन में गन्ने के रस में चावल एवं मूँग मिला कर डाला जायेगा। फिर उस में मेवे, घी के साथ ढेरसारा दूध भी डाल दिया जायेगा। पकते पोंगली को एक सीधे सुडौल गन्ने के टुकड़े से खूब मिलाया जायेगा!! पकते पोंगल के चूल्हे को लगा कर घर के सब गोल लोग-बना कर खड़े होकर, इष्टपूर्वक प्रसंग करते रहते हैं। पोंगली बनते-बनते उफन कर चूलहे में ज़ारा-सा गिरने देते हैं। पोंगल के अवशेषों को चूलहे में गिरना लोग अच्छा समझते हैं। इस प्रकार जब पोंगल के पदार्थ उफन कर चूलहे में गिरते समय चूल्हे से सटे खड़े परिवार के सब सदस्य हर्षोल्लास के साथ, ''पोंगलो, पोंगल!!'' कह कर जोरदार नारे लगाते हैं। ऐसा चिल्लाते हुए लोग संक्रांति को अपने धर-बार में अह्वानित करते हैं!!

बस, इस तरह पोंगल के तैयार होने पर, सब परिवार के सदस्य एक जुट मिल कर पंक्ति बन के बैठ कर, घर की महिलाओं के इष्टपूर्वक परोसते समय, भरपेट खायेंगे। संक्रांति के पावन पर्व दिन पर कोई माँसाहार न होगा। सांबार, घी, दूध, वडा, दही, तालिंपू व पोरियल के साथ दुपहर का मिष्टान्न भोजन चलेगा!!

रात को गाँव की प्रधान कूडलि पर बड़ा-सा मंच या वेदी बनेगी, जहाँ रात के भोजनानंतर गाँव के सब जने इकट्ठा हो जाते हैं। नाच-गान का प्रदर्शन होयेगा। कहीं नाटक व नृत्य-प्रदर्शन होगा। रात-भर इस प्रकार खुशियाँ मनाते बिताने पर, संक्रांति की हर खुशी लोगों के नस-नस में दौड़ती फिरेगी!!

३) पारण :- किसी बड़े त्योहार का अगला दिन पारण होता है। किसी-किसी त्योहार के दिन व्रत रखा जाता है। खान-पान की पाबंदी का व्यवहार होता है। ऐसे पावन पर्व के अवसर पर दिनांत तक जो चाहे वह खाया नहीं जाता है। व्रतपर्व की समाप्ति के अगले दिन लोग उन्मुक्त बन कर, अपने ढंग का आचरण तथा आहार-स्वीकरण कर, आनंदोत्साहों के साथ दिन गुजारते व्यतीत करते हैं!! पारण का अर्थ होता है- व्यतीत व पार हुआ होना। त्योहार के नियमानुसार आचरण कर, अगले दिन व्रत की परिसमाप्ति के आनंद का मजा लूटना ही पारण कहलाता है।

संक्रांति वास्तव में एक कृतज्ञता-सूचक पर्व है, सूरज के प्रति, भूमि के प्रति तथा मेघों या जल के स्रोतों के प्रति। संक्रांति के दूसरे दिन पर लोग पवित्र ढंग से चावल, नव-धान्य, गन्ने का रस, दूध आदियों से ''पोंगली'' बनाकर, प्रकृति के प्राधिनेता सूर्यभगवान को अर्घ्य देने के साथ-साथ निवेदित करके, अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं। संक्रांति के दूसरे दिन का बस यही एक कार्य घटता है। और, उस कृतज्ञता के प्रकटित अनंतर के अगले दिन, लोग मुक्त- बन कर, खुले दिल से त्योहार का मजा लूटते हैं। घर-घर में मनचाहे पक्वान बनते हैं। नाच-गान होता है और पोंगल के परामर्श की खुशी में मित्रों तथा रिश्तेदारों

का आना-जाना होता है!! यही पारण है। पर्व के पार की अपरंपार आनंद का नाम पारण है!!

४) पशुओं का उत्सव :- रैयत की खास अमानत पशु हैं। वेदकाल से मनुष्य पशुओं के संग जीता आ रहा है। पशु किसान की जीविका के प्रमुख अंग रह चुके हैं। गाय, बैल, भेड़, बकरी आदि किसान के भागेदारी पशु हैं! खेती में इन पशुओं की साझेदारी का हम अंदाज़ा नहीं लगा पायेंगे! रैयत इन पशुओं तथा जंतुओं को अपने ही परिवार के सदस्य मानता है और उन्हें अपनी मर्जी के अनुसार का नाम देकर उन्हें पुकारता है। और वे सज्ञन-पशु भी अपने-अपने नामों से पुकारे जाने से, मनुष्यों की तरह प्रतिस्पंदित होते हुए अपना हर्ष प्रकट करते हैं।

और, इस तरह कर्षक के चबूतरे को भरनेवाले पशुओं के श्रम को किसान भूलेगा नहीं। अपनी खेती में अपनी ही तरह मेहनत बँटा कर पसीना बहाने वाले अपने भागेदार पशुओं का, संक्रांति के इस पावन पर्व की श्रृंखला में किसान एक अलग ही ढंग का ''पशु-पर्व'' बना कर उनके प्रति अपना आभार प्रकट कर, धन्य हो जाता है!! इस प्रकार अपनी खेती के कामों में हाथ बँटाने वाले जीव-जंतुओं के प्रति अभार की घोषणा में एक विशेष पर्व मनाना शायद विश्व-भर में एक दक्षिण-भारत में ही होगा!!

पशुओं के पर्व दिन पर गाय, बैल या भैसों का खेती में विनियोग कतई नहीं होगा। सुबह उठ कर हर जानवर का स्नान कराया जायेगा- नदियों, नालों, तालाबों या खेत के पंपसेटों के पास। फिर उन्हें फूल आदियों से यथाशक्ति सजाया जायेगा। उनके सींग साफ कर, अग्रभाग पर सींगाणी लगा कर कीले से बिठा दिया जायेगा। पशु-त्योहार पर किसान लोग अपने पशुओं को खूब खिलाते हैं और सजावट के बाद घरबार पशुओं के झुंड की आरती उठाते हैं।

सायंकाल चार बजे गाँव की गलियों में खूब सजे पशुओं का जुलूस निकाला जायेगा, जिसे दरसते हमारी दो आखें पर्याप्त नहीं होतीं!! इन पशु-जुलूसों को दरसने गाँव के लोगों की काफी भीड़ जमा हो जाती है। किसी-किसी गाँव में पशुओं का होड़ भी लगाया जाता है, जिस में भाग लेने नौ जवान पुरुष कोने-कोने से आ जाते हैं।

१७ वीं सदी के तांजौर राजाओं की दरबारी नर्त्तकी ''मुद्दुपलनी'' नामक विदुषी-महिला ने अपने श्रृंगार काव्य ''राधिका-सांत्वन'' में उल्लेख किया है कि ब्रजविहारी श्रीकृष्ण ने अपने यशस्वी शौर्य के साथ इस तरह के पशुओं की होड़ में अपने मामा कुंभांड़ की पुत्री ''राधिका अथवा नीलादेवी'' को जीत कर विवाह किया था!!

५) पितृदेवता-तर्पण :- अपनी पिछली पीढ़ियों के स्वर्गवासी लोगों को ''पितृदेवता'' कहेंगे। पितृदेव स्वर्ग में होंगे। जिंदा पीढ़ियों के मनुष्य उनके आभार होंगे, क्योंकि हमें उन्हीं से यह जनम प्राप्त हो पाया है। इसी कृतज्ञता के अर्पण के विषय में संक्रांति पर्वदिन के संदर्भ में पितृओं को तिलांजलि दी जाती है।

प्रायः पूस की एकादशी पर ''भोगी'' त्योहार होगा। द्वादशी पर संक्रान्ति, त्रयोदशी के दिन पारण और चतुर्दशी पर पशुओं का त्योहार पड़ता है। फिर अगले दिन अमावस आता है। यह पूसमाह की अमावास्या ''पितरों की अमावास्या'' कहलाती है। तमिल में तैमास में पोंगल-त्योहार पड़ता है। इस तैमाह की अमावास्या ''तैपूस'' कहलाती है। पितरों की अमावास्या के दिन गाँव का पंडित घर-घर जाकर, पितरों की अच्छी स्थिति के वास्ते मंत्र पठन कर, तिलांजलि दे आता है!!

समापन :- संक्रांति का दक्षिण भारत में काफी महत्व है। वह सबसे बड़ा त्योहार है। संक्रांति प्रकृति-पूजन का संदेश देता है। संक्रांति के भोगि के दिन सूर्यभगवान को पूजने का भी रिवाज़ है। और पर्वों पर लोग उन्हें मनाने के लिए पैसा जमा करते हैं। संक्रांति पावन पर्व पर ऐसा न होकर, धन और धान अपने-आप सिद्ध होकर, पर्व के नाम पर मना दिया जाता है!!

तोंडरडिप्पोडि आळवार

(श्री भक्तांघ्रिरेणु स्वामीजी)

- श्री नरसिंग खेमका
मोबाइल - ९३४८६५५२२०

तिरुनक्षत्र - मार्गशीर्ष मास, ज्येष्ठा नक्षत्र

अवतार स्थल - तिरुमण्डंगुडि

आचार्य - श्री विष्वक्सेन स्वामीजी

ग्रंथ रचना सूची - तुरुमालै, तिरुपळ्ळियेळ्ळुच्चि

परमपद प्रस्थान प्रदेश - श्रीरंगम्

श्री वेदांती स्वामीजी अपने तिरुपळ्ळियेळ्ळुच्चि के व्याख्यान की अवतारिका में ''अनादि मायया सुप्तः'' प्रमाण से साबित करते हैं कि आळवार संसारी थे; अनादि काल से अज्ञान के कारण संसार में निद्रावस्था में थे और भगवान श्रीमन्नारायण ने उन्हें जागृत किया है। उसके (उन्हें परिपूर्ण ज्ञान से अनुग्रह किया) पश्चात् श्रीरंगनाथ भगवान योगनिद्रा में चले जाते हैं और आळवार उन्हें उठाने की चेष्ठा करते हैं और भगवान से प्रार्थना करते हैं कि उन्हें कैंकर्य प्रदान करें।

श्री पेरियवाच्छान पिळ्ळै स्वामीजी तिरुपळ्ळियेळ्ळुच्चि के व्याख्यान की अवतारिका में आल्वार के पाशुरों द्वारा ही उनकी वैभवता को प्रकाशित करते हैं। भगवान के दिव्य परिपूर्ण कृपा से जागृत आल्वार, स्वरूप ज्ञान प्राप्त कर, पेरियपेरुमाळ के पास जाते हैं। आपश्री यह पाते हैं कि भगवान आपश्री का स्वागत, कुशल क्षेम नहीं पूछते हैं, अपितु आँख बंद किये लेटे हुए हैं। इससे यह नहीं समझना चाहिए कि भगवान को आळवार के ऊपर श्रद्धा नहीं है(संबंध रहित) क्योंकि आळवार और भगवान को एक दूजे के प्रति बहुत लगाव है। हम यह भी नहीं कह सकते कि भगवान अस्वस्थता के कारण शयन किये हुए हैं क्यों कि इस प्रकार के दोष केवल भौतिक तत्त्व के अंग हैं, जो तमोगुण से परिपूर्ण है, लेकिन पेरियपेरुमाळ भौतिक तत्त्व से परे अलौकिक शुद्धसत्व हैं और इसमें कोई संशय नहीं है। पेरियपेरुमाळ शयन अवस्था में सोच रहे हैं कि जैसे उन्होंने आळवार को सुधार कर निम्न गुणों से अनुग्रहित किया, उसी प्रकार कैसे संसारियों को सुधार कर अनुग्रह करें।

१. आल्वार कहते हैं ''आदलाल् पिरवि वेन्डेन्'' मतलब इस संसार में मैं पैदा होना नहीं चाहता हूँ- इससे यह साबित होता है कि उन्हें यह ज्ञात है कि प्रकृति संबन्ध एक जीवात्मा के लिए सही नहीं है।

२. आळवार को स्वरूप यथात्म्य ज्ञान (आत्मा का निजस्वरूप) अर्थात् भागवत शेषत्व का परिपूर्ण ज्ञान है क्योंकि वे कहते हैं ''पोनगम शेयद सेशम् तरुवरेल पुनिदम'' जिसका अर्थ है श्रीवैष्णव का शेषप्रासद ही श्रेष्ठमहाप्रसाद है।

३. इन्हें सांसारिक विषय भोग और आध्यात्मिक विषयों का भेद ज्ञान स्पष्ठ रूप से है क्योंकि वे कहते हैं ''इच्चुवै तविर अच्चुवै पेरिनुम वेण्डेन'' - यानि मेरे लिए पेरिय पेरुमाळ के सिवा कोई भी वस्तु अनुभव के योग्य नहीं हैं।

४. आळवार कहते हैं ''कावलिल पुलनै वैत्तु'' अर्थात् अपनी इन्द्रियों पर नियंत्रण करना, इससे यह पता चलता हैं कि उन्होंने इन्द्रियों को जीत कर अपने वश में रखा है।

५. आळवार कहते हैं ''मून्नु अनलै ओम्बुम कुरिकोल अणदंण्णमै तन्नै ओलित्तिट्टेन'' - अर्थात मैं कर्म योगादि मार्गों को त्याग दिया हूँ। इससे यह साबित होता है कि

आळ्वार ने (भगवान को पाने के लिए) संसार के अन्य उपायों का परित्याग किया है।

६. आळ्वार को उपाय यथात्म्य ज्ञान संपूर्ण रूप से है। यह विषय हमें उनकी बात ''उन अरुल एन्नुम आचै तन्नाल पोय्यनेन वन्दुणिंदेन,'' अर्थात् मैं यहाँ केवल आपकी दया को उपाय मानकर पूरी तरह से निर्भर होकर आया हूँ।

अन्त में आचार्य पेरियवाच्छान पिळ्ळै कहते हैं आळ्वार के इन विशेष गुणों के कारण वे पेरियपेरुमाल को अत्यन्त प्रिय हैं जैसे बताते हैं ''वालुम शोम्बरे उगत्ति पोलुम,'' अर्थात् जो भगवान को पूरी तरह शरणागति करते हैं वे भगवान के अत्यन्त प्रीति के पात्र हैं।

आळ्वार की वैभवता को जानने के बाद हम उनका दिव्य चरित्र जानने के लिए प्रयत्न करेंगे।

उनके जन्म काल में श्रीरंगनाथ भगवान के दिव्य आशीर्वाद से आळ्वार शुद्धसत्व गुणों से ''विप्रनारायण'' नाम से जन्म लेते हैं। कालानुगुण किये जाने वाले पूरे संस्कार (चौलम्, उपनयनादि) प्राप्त करते हैं और पूर्ण वेद वेदांग का अर्थ सहित अध्ययन करते हैं। ज्ञानवैराग्य संपन्न विप्रनारायण श्रीरंगम् पहुँचकर श्रीरंगनाथ भगवान की पूजा करते हैं। उनकी भक्ति से प्रसन्न होकर श्रीरंगनाथ भगवान अपना दिव्य मंगल सौन्दर्य दर्शन का अनुग्रह करके उनकी भक्ति को बढ़ाते हैं और श्रीरंगम् में ही आपश्री के नित्यनिवास की व्यवस्था करते हैं।

कैंकर्य पण्डित जैसे पुण्डरीक (उत्तम भक्त), मालाकार (मथुरा में श्रीकृष्ण और बलराम को पुष्पमाला बनाकर समर्पित करते थे), गजेन्द्र और श्रीविष्णुचित्त स्वामीजी (पेरियाळ्वार आठ फूलों से सुन्दर माला बनाकर एम्पेरुमान को अलंकरण करते थे) के पद छाया को अनुसरित विप्रनारायण एक सुन्दर नन्दनवन का निर्माण कर प्रतिदिन पुष्पमाला बनाकर श्रीरंगनाथ भगवान को अर्पण करते थे।

एक दिन तिरुकरम्बनूर गाँव वाली देवदेवी नामक वेश्या उरैयूर से अपने गाँव को लौटते समय सुन्दर पुष्पों से और पक्षियों से भरे हुए उन बगीचे को देखकर आश्चर्य चकित होकर नन्दनवन आ पहुँचती है। उस समय में देवदेवी, सुन्दर मुखी, सर पर लंबे सुन्दर केश, सुन्दर वस्त्र पहने, तुलसी और पद्ममाला से अलंकृत, द्वादश ऊर्ध्वपुण्ड्र से तेजोमय, पौधों को पानी देनेवाले उपकरण को हाथों में लिए हुए विप्रनारयण को देखती है। विप्रनारायण कैंकर्य में निमग्न रहते हैं और उनकी दृष्टि उस वेश्या पर नहीं आती है। तब देवदेवी अपनी सहेलियों से पूछती है कि ''यह मनुष्य पागल है या अपुरुष है जो अपने सामने खडी सौन्दर्यराशी को देख नहीं रहा है''। सहेलियाँ जवाब देती हैं कि वे विप्रनारायण हैं, भगवान श्रीरंगनाथ का कैंकर्य करते हैं और उनकी सुन्दरता की ओर नहीं देखेंगे। सहेलियाँ देवदेवी को चुनौती देती हैं कि यदि विप्रनारायण को छः महीनों में देवदेवी अपनी तरफ मोड लेती हैं तब वे मानेंगे कि वह लोकोत्तर सौन्दर्य राशी है और छः महीने उनकी दासी बन जाएँगी। उस चुनौती को स्वीकार करके देवदेवी अपने आभरण सहेलियों को देकर एक सात्विक रूप ले लेती हैं।

देवदेवी विप्रनारायण के पास जाकर उन्हें प्रणाम करते हुए भगवान की अत्यंत आंतरंगिक सेवा में निमग्न हुए भागवत की शरण में अपने आप को पाने की इच्छा प्रकट करती है। आळ्वार से देवदेवी कहती है कि वह आळ्वार भिक्षाटन पूर्ती करके लौट आने तक निरीक्षण करेगी। विप्रनारायण उनकी विनती स्वीकार कर लेते हैं। तब से देवदेवी विप्रनारायण की सेवा करते हुए उनका शेषप्रसाद पाते कुछ समय बिताती है।

एक दिन देवदेवी बगीचे में काम करते समय बहुत बारिश होती है। तब देवदेवी गीले कपडों से विप्रनारायण के आश्रम में प्रवेश करती है। विप्रनारायण पोंछने के लिए अपने ऊपर के वस्त्र को देते हैं। उस समय दोनों अग्नि और घी की तरह नजदीक हो जाते हैं। अगले दिन देवदेवी अपने आभरणों से अलंकृत होकर विप्रनारायण के सामने आती हैं। उनका सौंदर्य देखकर विप्रनारायण उस दिन से उनका दास बन जाते हैं और भगवान के कैंकर्य को भूल कर पूरी तरह से छोड देते हैं। देवदेवी विप्रनारायण के

ऊपर कुछ समय तक अपना कपट प्रेम दिखाती है। उस प्यार को देख कर विप्रनारायण पूरी तरह से सेवक बन जाते हैं। देवदेवी विप्रनारायण की धन दौलत को हडप कर उन्हें बाहर निकाल देती है। विप्रनारायण उस दिन से देवदेवी की अनुमति के लिये उनके आँगन में प्रतीक्षा करते हुए समय बिताने लगे। एक दिन भगवान श्रीरंगनाथ और माता श्रीरंगनायकी टहल रहे थे और उस समय विप्रनारायण को देख कर श्रीरंगनायकी अपने स्वामी से विचार करती हैं चिंता से वेश्यागृह में इन्तजार करने वाला यह व्यक्ति कौन है। तब भगवान श्रीरंगनाथजी उत्तर देते हैं कि यह उनका कैंकर्य करने वाला भक्त था, लेकिन अब वेश्यालोल होकर ऐसे तडप रहा है। तब पुरुषकार रूपिणी माता श्रीरंगनायकी श्रीरंगनाथजी से पूछती हैं ''एक आंतरंगिक कैंकर्य करनेवाला भक्त विषयभोगों में डूब रहा हैं और वे उसे कैसे छोड रहे हैं। इनकी माया को दूर कर फिर से इन्हें अपने कैंकर्य में लगा दीजिये।'' भगवान श्रीरंगनाथ श्रीरंगनायकी की बात मान उन्हें सुधारने के लिये अपने तिरुवाराधन से एक स्वर्ण पात्र को लेकर अपना रूप बदल कर देवदेवी के घर जाकर उनके दरवाजे पर खटखटाते हैं। तब देवदेवी उनसे अपने बारे में पूछने से बताते हैं कि वे विप्रनारायण के दास अळगिय मणवाळन हैं। विप्रनारायण ने आप के लिए यह स्वर्ण पात्र भेजा है। यह सुनकर देवदेवी आनन्द से विप्रनारायण को अंदर आने के लिए आज्ञा दे देती हैं। अळगिय मणवाळन विप्रनारायण के पास जाकर देवदेवी की मंजूरी बताते हैं। विप्रनारायण देवदेवी के घर पहुँच कर फिर से विषयभोगों में डूब जाता है। पेरियपेरुमाळ अपनी सन्निधि को लौट कर आदिशेष पर आनंद से लेट जाते हैं।

अगले दिन सन्निधि पूजारियों ने पूजा करने के द्रव्य में एक पात्र कम पाया और इस विषय को महाराज तक पहुँचाते हैं। महाराज पूजारियों की अश्रद्धता पर क्रोध आग्रह करते हैं। एक सेविका कुएँ से पानी लाते समय सुनती है कि उनके रिश्तेदारों में एक रिश्तेदार को राजा के क्रोध आग्रह का पात्र होना पड़ा है और इस कारण वह उन्हें बता देती है कि विप्रनारायण ने देवदेवी को उपहार के रूप में एक स्वर्ण पात्र दिया है जिसे देवदेवी ने अपनी तकिया के नीछे रखा है। पूजारी ने महाराजा के सैनिकों को विषय की सूचना की और तुरन्त कर्मचारियों ने देवदेवी के घर पहुँचकर पात्र खोज निकाला है। देवदेवी के साथ विप्रनारायण को निर्बन्ध कर देते हैं। राजा ने देवदेवी से पूछा ''कोई देता भी हैं तब भी भगवान का पात्र कैसे ले सकती हो।'' देवदेवी ने राजा से कहा ''मुझे यह नहीं मालूम कि यह पात्र भगवान का है, विप्रनारायण ने इसे अपना पात्र कहकर अपने दास अळगिय मणवाळन के द्वारा भेजा है और इस कारण निस्संकोच से स्वीकार किया है।'' यह सुनकर विप्रनारायण चौंक कर कहते हैं ''न ही उनके कोई दास हैं, और न ही कोई स्वर्ण पात्र उनके पास है।'' यह वाद-विवाद सुनकर राजा देवदेवी को जुरमाना डाल कर छोड देते हैं। पात्र को भगवान की सन्निधि में वापस कर देते हैं और विचारण पूरा होने तक विप्रनारायण को कारागृह में रखने के लिए आज्ञा दी।

घटित संघटनों को देख कर माता श्रीरंगनायकी ने भगवान श्रीरंगनाथ से विप्रनारायण को अपनी लीला की नहीं अपनी कृपा का पात्र बनाने की विनती करती हैं। भगवान श्रीरंगनाथ उनकी बात मान लेते हैं और उस दिन रात को महाराजा के सपने में साक्षात्कार होकर कहते हैं कि विप्रनारायण मेरा अत्यंत आंतरंगिक कैंकर्य करने वाले भक्त हैं। विप्रनारायण के प्रारब्ध कर्म को मिटाने के लिए मुझसे रची हुई यह रचना है। भगवान श्रीरंगनाथ महाराजा को आदेश करते हैं कि विप्रनारायण को तुरन्त छोड़ दें और उन्हें उनके पूर्व कैंकर्य में जुटाने की आज्ञा देते हैं। महाराज नीन्द से जाग उठते हैं और विप्रनारायण का वैभव जानकर उन्हें आज़ाद कर देते हैं और सपने का वृत्तान्त सभी को बता देते हैं। विप्रनारायण को धन-दौलत से गौरवान्वित करते हैं और घर भेज देते हैं। तब विप्रनारायण भगवान की महानता और उन्हें सुधारने के लिए भगवान के प्रयास को महसूस करते हैं। इस सांसारिक भोगों को

छोड देते हैं और भागवतों का श्रीपाद तीर्थ स्वीकार करते हैं। (भागवतों का श्रीपाद तीर्थ समस्त पापों का प्रायश्चित करता है)।

तत्पश्चात् विप्रनारायण तोंडरडिप्पोडि आळवार एवं भक्तांघ्रिरेणु के नामों से मशूर हुए। तोण्डर=भक्त, अडि/अंघ्रि= पाद पद्म, पोडि/रेणु= धूल। पूरा अर्थ है- भागवत भक्तों की पाद धूल। अन्य आळवार से अव्दितीय वैभवता इन आल्वार की हैं - केवल इन्हीं के नाम में भागवत शेषत्व का प्रकाश होता है। जैसे तिरुवडि (हनुमान/गरुड), इळय पेरुमाळ (लक्ष्मण) एवं शठकोप ने भगवान के अलावा किसी भी अन्य विषय को मूल्यवान नहीं माना, वैसे ही तोन्डरडिप्पोडि आळवार भी कहते हैं ''इन्दिर लोकं आलुं अच्चुवै पेरिनुं वेंडेन'' अर्थात् मुझे श्रीवैकुण्ठ के बारे में सोचने की भी इच्छा नहीं है। मुझे केवल श्रीरंग क्षेत्र में पेरियपेरुमाळ का अनुभव चाहिए। पेरियपेरुमाळ की कृपा से ही उनमें बदलाव आने के कारण, आळवार उनके आभारी हो चुके थे और इसी कारण अन्य आळवारों की तरह दिव्यदेशों में विराजमान अर्चामूर्तियों के बारे में प्रबन्ध गाने से भिन्न केवल पेरियपेरुमाळ को ही अपना प्रबन्ध समर्पित किया है। आळवार के अटूट विश्वास और पेरुमाळ पर वात्सल्य को देखकर पेरियपेरुमाळ भी उस प्यार का प्रति-फल चुकाते हुए उन्हें परिपूर्ण ज्ञान से अनुग्रह करते हैं और अपना पर्वतादिपंचक (एम्पेरुमान के पाँच निवास क्षेत्र) में स्थित विविध नाम, रूप, दिव्य लीलाओं को श्रीरंगम् से ही आळवार को दर्शन कराते हैं। देवदेवी भी आळवार की भक्ति और ज्ञान को देख कर अपना पूर्ण धन भगवदर्पित करके सेवा निरत हो जाती है।

पर-भक्ति, पर-ज्ञान और परम भक्ति में डूबे और अपना सर्वस्व पेरियपेरुमाळ को मान आळवार तिरुमंत्र अनुसंधान और नाम संकीर्तन से पेरियपेरुमाळ को निरन्तर अनुभव करते थे। अपने दिव्य अवस्था का अनुभव करते हुए, आल्वार घोषित करते हैं कि यमराज को देखकर श्रीवैष्णव को कंपित होने की आवश्यकता नहीं है। आल्वार कहते हैं कि यमराज के दूत श्रीवैष्णव के तिरुवडि पाने के लिए काँक्षित होते हैं और एक श्रीवैष्णव दूसरे श्रीवैष्णव के श्रीपाद-पद्मों को पूजनीय मानते हैं। जैसे सौनका-ऋषि ने सदानन्दर को एम्पेरुमान के दिव्य नामों की वैभवता समझाई है उसी तरह आळवार पेरियपेरुमाळ के सामने तिरुमालै गान करते हैं। जैसे श्रीशठकोप स्वामीजी अचित तत्त्व के दोषों को पहचानते हैं (२४ तत्त्व - मूल प्रकृति, महान, अहंकारम, मनस, पाँच ज्ञान-इन्द्रिय, पाँच कर्म-इन्द्रिय, पाँच तन्मात्र, पाँच भूत), आळवार भी अचित तत्त्व स्पष्ट रूप से पहचानते हैं जैसे ''पुरम सुवर ओट्टै माडम'' अर्थ यह शरीर केवल बाहर की दीवार है और आत्मा ही अन्दर निवास करती है और नियंत्रक है। आळवार प्रतिपादित करते हैं कि जीवात्मा का स्वरूप एम्पेरुमान के भक्तों का सेवक होना है और यह विषय ''अडियारोरक्कु'' में बताते हैं अर्थात् जीवात्मा भागवतों का सेवक है। तिरुमंत्र की निष्ठा से परिपूर्ण आळवार ''मेम्पोरुळ'' पाशुर में प्रकट करते हैं केवल एम्पेरुमान ही उपाय है जो तिरुमालै प्रबन्ध का सार है। ''मेम्पोरुळ'' पाशुर के अगले पाशुरों में ऐलान करते हैं कि भागवत सेवा ही श्रीवैष्णव का अंतिम लक्ष्य है और उनके तिरुपळ्ळियेळ्ळुच्चि के अंतिम पाशुर में एम्पेरुमान से विनती करते हैं ''उंनडियार्क्काटपडुताय'' जिसका अर्थ है मुझे आपके भक्तों का अनुसेवी बना दीजिये। इस तरह आळवार इन महान सिद्धान्तों को पूरे संसार की उन्नती की आकांक्षा से अपने दो दिव्यप्रबन्ध ''तिरुमालै'' और ''तिरुपळ्ळियेळ्ळुचि'' में समर्पण किया है।

तनियन

तमेव मत्वा परवासुदेवं रन्गेसयं राजवदर्हणियम्।
प्राभोद्कीं योक्रुत सूक्तिमालां भक्तान्घ्रिरेणुं भगवन्तमीडे।।
कोदंडज्येष्ठानक्षत्रे मन्डंगुडिपुरोभ्द्वम्।
चोलोव्र्या वनमालांशं भक्तांघ्रिरेणुमाश्रये।।

भोगी, पोंगल और संक्रांति पर्व

- श्री ज्योतीन्द्र के. अजवालिया
मोबाइल - ९८२५९९३६३६

भारतीय संस्कृति में हर एक त्यौहार का हर एक दिन का महत्व रहा है। मानव जीवन को बचाने के लिए और मानव को सहायता करने के लिए प्रकृति हमें बहुत मदद करती है, इसीलिए प्रकृति का और भगवान का धन्यवाद करने के लिए हमारी संस्कृति में कई सारे त्यौहार मनाने की परंपरा रही है।

ऐसा ही एक त्योहार पोंगल और संक्रांति की बात यहाँ करने जा रहे हैं। पोंगल दक्षिण भारत का प्रसिद्ध पर्व है। विशेषतया यह पर्व किसानों में मुख्य रूप से मनाया जाता है। यह पर्व दक्षिण भारत के तमिलनाडु राज्य में सबसे प्रसिद्ध है। चूँकि भारत एक कृषि प्रधान देश है, इसीलिए यह त्योहार भी पूर्णतया कृषि और फसल से ही जुड़ा हुआ है। यह पर्व चार दिन तक चलता है।

(१) पहला दिन भोगी पोंगल

(२) दूसरा दिन सूर्य पोंगल

(३) तीसरा दिन मट्टू पोंगल

(४) चौथा दिन कनुम पोंगल

(१) भोगी पोंगल

पहले पोंगल को भोगी पोंगल कहते हैं, जो देवराज इंद्र को समर्पित है। इस पोंगल को भोगी पोंगल इसीलिए कहते हैं कि देवराज इंद्र भोग विलास में मस्त रहने वाले देवता है, देवराज इंद्र को भोगी के नाम से भी जाने जाते हैं। इंद्र देव को प्रसन्न करने के लिए इस दिन देवराज इंद्र की पूजा-आराधना की जाती है। विशेषतया इस दिन संध्या समय में लोग अपने-अपने घर से पुराने वस्त्र, कूड़ा-कचरा, लकड़ी आदि लेकर एक जगह पर इकट्ठा करते हैं और उसे जलाए जाते हैं। यह ईश्वर के प्रति सम्मान एवं बुराइयों के अंत की भावना को दर्शाता है।

भोगी पोंगल की पौराणिक कथा

देवराज इंद्र और भगवान श्रीकृष्ण के साथ जुड़ी हुई है यह कथा। द्वापर युग में जब श्रीहरि विष्णु ने भगवान श्रीकृष्ण के रूप में अवतार लिया, तब घमंडी देवराज इंद्र का मान भंग करने की उसने योजना बनाई। उन्हें गोकुल वासियों को इंद्र की पूजा नहीं करने का फरमान किया। तब क्रोधवश इंद्र ने भयानक वर्षा करके सब कुछ उजाड़ दिया। तब श्री कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को अपनी एक उंगली पर सात दिन तक उठाकर ब्रजवासी को शरण दिया। तब इंद्र का मान भंग हुआ और भगवान श्री कृष्ण का असल परिचय हुआ। तब इंद्रदेव श्रीकृष्ण की शरण में आ गए और गोकुल वासियों की खेती में सहायता करके फिर से सब फसल हरी-भरी कर दी। तब से तमिलनाडु-आंध्रप्रदेश, दक्षिण भारत में देवराज इंद्र का धन्यवाद करने के लिए भोगी पोंगल मनाने की परंपरा शुरु हुई।

भोगी पोंगल की दुसरी पौराणिक कथा

दक्षिण भारत की आंडाल रंगनायकी की यह कथा है। आंडाल, गोदा के नाम से भी प्रचलित है। दक्षिण

भारत में मदुरा से थोड़ी दूर श्रीविल्लिपुत्तुर (श्री धन्वीनव्यपुर) दिव्य देश है। वहाँ श्री वटपत्रशायी भगवान का बड़ा मंदिर है। इस गाँव में विष्णुचित्त स्वामी (श्री भट्टनाथ) जी रहते थे। वे श्री वटपत्रशायी भगवान की नित्य तुलसी पत्र से कैंकर्य सेवा करते थे। एक दिन तुलसी वन में भूमि से एक कन्या प्राप्त हुई। उसका नाम गोदा रखा गया। गोदा ने अपने पिताश्री को ही अपने गुरु के रूप में स्वीकार किया। पिताजी से भागवत पुराण, विष्णु पुराण आदि का विशेष ज्ञान प्राप्त किया। बचपन से ही भगवान के प्रति अनहद लगाव था बहुत प्रेम था। गोदा ने निश्चय किया कि मैं भगवान से ही लग्न करूंगी, मेरा यह जीवन भगवान को समर्पित कर दूँगी। तब से भगवान को प्राप्त करने के लिए बहुत भक्ति की, लेकिन भगवान मिले नहीं। कृष्ण अवतार में गोपियों ने भगवान श्रीकृष्ण को प्राप्त करने हेतु कात्यायनी व्रत किया था, उसका अनुसंधान करके गोदा ने भी भगवान को प्राप्त करने के लिए धनुर्मास का व्रत किया। उसको हम ''श्री व्रत'' कहते हैं। व्रत अनुसंधान में गोदा ने दूध, घी और श्रृंगार की चीजों का परित्याग किया, अलंकार भोजन आदि का परित्याग किया। सुबह में प्रातः निर्मल स्नान किया। इस व्रत में सब सहेलियों और रामानुज संप्रदाय के सभी आल्वारों को साथ में जोड़ा। प्रातः निर्मल स्नान, प्रभु आराधना और संप्रदाय के सभी अल्वारों की शिफारस से गोदा से २७ वे दिन प्रभु श्रीरंगनाथ का मिलन हुआ। प्रभु श्रीरंगनाथ बहुत प्रसन्न हुए और गोदा का पाणि-ग्रहण किया, गोदा को पत्नी के रूप में स्वीकार किया। गोदा धन्य हो गई गोदा और सहेली तृप्त हो गईं, गोदा का संकल्प सफल हो गया। इसीलिए व्रत के आरंभ में जो अलंकार, भोजन आदि का परित्याग किया था, वह भगवान के मिल जाने के बाद भगवान-दंपति की प्रसन्नता-हेतु अलंकारासन और भोज्यासन का होना स्वाभाविक था। इसीलिए गोदा ने नाना प्रकार के अलंकार आभूषण धारण किया और घृतपूर्ण श्रेष्ठ क्षीरान्न भोग (दूध घी और चावल का व्यंजन) भगवान दंपति को अर्पण किया। इस भोग से श्री रंगनाथ भगवान अति प्रसन्न हुआ। श्री रंगनाथ को ही धारक-पोषक और भोग्य आदि सबकुछ मानने वाली इन गोपियों और गोदा को मन में अब कुछ भी इच्छा नहीं थी, सिर्फ और सिर्फ श्री रंगनाथ भगवान ही उसका भोग था। इसीलिए धनुर्मास का २७ वा दिन भोगी दिन के नाम से प्रचलित हुआ। ''श्रीव्रत'' की पूर्णाहुति ही भोगी दिन कहलाती है। यह भोगी दिन धनुर्मास का समापन दिन भी है। इसीलिए श्री रामानुज संप्रदाय, श्री संप्रदाय में भोगी दिन का विशेष महत्व है। दक्षिण भारत और श्री संप्रदाय में भोगी दिन गोदा रंगनाथ भगवान का लग्न उत्सव बड़ी धूम-धाम से मनाने की प्रणाली रही है। यह भोगी पोंगल का प्रमुख अर्थ है।

दूसरा दिन सूर्य पोंगल

फसलों में सूर्य देव का स्थान भी प्रमुख है। उनकी धूपसे ही फसलें उगती हैं। इस दिन मिट्टी के बर्तन में गुड और चावल का व्यंजन बनाते हैं और सूर्यनारायण भगवान को अर्पण करते हैं। और श्रीसूर्य नारायण भगवान की विशेष रूप से पूजा-आराधना करने की प्रणाली है। गुड और चावल के व्यंजन को गुड पोंगल कहते हैं जो सूर्यदेव को बहुत पसंद है।

तीसरा दिन मट्टू पोंगल

यह पर्व खेती के काम में आने वाले बैल और गायों को समर्पित है। कथा ऐसी है कि एक बार भगवान शिव ने अपना एक बैल जिसका नाम मट्टू (वसव) था। उसे धरती पर जाकर मनुष्यों से यह कहने को कहा कि प्रतिदिन तेल लगाकर स्नान करें और महीने में एक बार भोजन ग्रहण करें। मट्टू ने मानव को

उल्टा कह दिया प्रतिदिन भोजन और महीने में एक बार स्नान करने को कहा। शिवजी मट्टू की इस भूल से क्रोधित हुआ। तब मट्टू को मनुष्य की खेती में सहायता हेतु पृथ्वी पर भेजा। तब से किसान लोग इस दिन बैल की पूजा करते हैं। बैल, गाय, बछड़ों को तिलक लगाते हैं। उनके सींगों को रंग लगाते हैं। इसीलिए मट्टू के नाम से यह तीसरा दिन मट्टू पोंगल कहलाता है।

चौथा दिन कनुमपोंगल

यह त्योहार दीपावाली की तरह मनाते हैं। इस दिन नए वस्त्र धारण करके सगे संबंधियों और मित्रों को बधाई देते हैं। इस दिन मुख्यतया महिलाओं के द्वारा काली माँ की पूजा का विधान भी है। सब महिलाएँ इकट्ठा होकर काली माँ की पूजा करती हैं। आराधना करती हैं। और उसकी उपासना भी करती हैं। इस दिन पोंगल व्यंजन को केले के पत्ते पर रखकर कौए को खाने के लिए दिया जाता है। विवाहित स्त्रियाँ अपने भाई के मंगल स्वास्थ्य की कामना करती हैं और उन्हें तिलक लगाती हैं। इसी तरह कनुम पोंगल को चौथे दिन मनाया जाता है।

इस तरह भोगी पोंगल आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु में और पोंगल पर्व खास करके तमिलनाडु और केरल में बड़ी धूमधाम से मनाते हैं। पोंगल से जुड़े अन्य त्योहार जिस दिन तमिलनाडु में और केरल में पोंगल का त्योहार मनाया जाता है, उस दिन भारतवर्ष में विभिन्न राज्यों में अलग-अलग त्योहार मनाने की परंपरा है। गुजरात और राजस्थान में उत्तरायण के नाम से जाने जाते हैं, असम में बिहू, हरियाणा और पंजाब में माघी और शेष भारत एवं नेपाल में मकर सक्रांति के नाम से यह त्योहार मनाया जाता है। साथ-साथ बांग्लादेश में उसी दिन शक्रेन का त्योहार मनाया जाता है।

संक्रांति और पतंग पर्व

विभिन्न राज्यों में संक्रांति के साथ (काइट फेस्टिवल) पतंग उत्सव भी होता है। धनुर्मास की अंतिम तिथि को हम मकर संक्रांति कहते हैं। इस पवित्र दिन में सूर्य धनु राशि से मकर राशि में संक्रांति करता है। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार प्रमुख ग्रह सूर्य देव है। सूर्य देव हर एक राशि में एक एक मास तक रहता है। एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश करता है। इस घटना को हम संक्रांति कहते हैं। संक्रांति काल बहुत पवित्र माना जाता है। मकर संक्रांति को उत्तरायण भी कहा जाता है। इस दिन संक्रांति काल में दान पुण्य का बहुत महत्व हमारे शास्त्र ने बताया है। संक्रांति पर्व में पितरों की आराधना भी अति सफल होती है। पितृदेव की प्रसन्नता हेतु दान पुण्य कर्म करने का भी विधान शास्त्र ने बताया है।

संक्रांति पर्व और पतंग उत्सव का रहस्य इस पवित्र पर्व में लोग रंगीन पतंग छत में जा के आकाश में उड़ाते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि पतंग उड़ाने के लिए हमे ऊंचाई पर जाना पड़ता है, इसी तरह प्रभु तक पहुंचने के लिए हमें तन की और मन की पवित्रता बनानी पड़ती है। ऐसी ऊंचाई प्राप्त करनी पड़ती है। इस पर्व से हम ऐसी सीख ले कि हमारा देह-रूपी पतंग अंत में ऊर्ध्व गति करें, जीवन रूपी पतंग कट जाने के बाद फिर से इस संसार में वापस न आए और उड़ती पतंग की तरह हमें ऊर्ध्व गति प्राप्त हो, यही पतंग उत्सव का अर्थ है।

जीवात्मा की लीला विभूति में से नित्य विभूति (वैकुंठ) में गति को हम आत्मा की संक्रांति कहते हैं। यही संक्रांति पर्व का रहस्य है।

जय श्रीमन्नारायण

श्रीमहापूर्ण स्वामीजी (श्रीपेरिय नम्बि)

- श्री कृष्ण कुमार गुप्त
मोबाइल - ८९८५२३१३१३

तिरुनक्षत्र : मार्गशीर्ष मास, ज्येष्ठ नक्षत्र

अवतार स्थल : श्रीरंगम्

शिष्य गण : श्रीरामानुजाचार्य, मलैकुनियनिन्नार, आरियुरिल् श्रीशठगोप दासर, अणियैरंगतमनुदानार पिळ्ळै, तिरुवैक्कुलमुदैयार भट्टर इत्यादि

स्थल जहाँ से परपदम को प्रस्थान हुए : चोल देश के पशुपति देवालय में

महापूर्ण स्वामीजी का जन्म श्रीरंगम में हुआ और वे महापूर्ण, परांकुश दास, पूर्णाचार्य के नामों से जाने गए हैं। वह श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी के मुख्य शिष्यों मे से हैं और श्री रामानुजाचार्य को श्रीरंगम लाने का उपकार उन्हीं को है। श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी के समय के बाद, सारे श्रीरंगम के श्रीवैष्णव श्रीमहापूर्ण स्वामीजी से विनती करते हैं कि वह श्रीरामानुजाचार्य को श्रीरंगम में लाये। अतः वह श्रीरंगम से सपरिवार कांचीपुरम की ओर चले। इसी दौरान श्रीरामानुजाचार्य भी श्रीरंगम की ओर निकल पडे। आश्चर्य की बात यह थी की वे दोनो मधुरांतकम में मिलते हैं और वहीं श्रीमहापूर्ण स्वमीजी श्रीरामानुजाचार्य का पञ्चसंस्कार करते हैं और कांचीपुरम् पहुँचकर श्रीरामानुजाचार्य को सांप्रदाय के अर्थ बतलाते हैं। इसी बीच श्रीरामानुजाचार्य की धर्मपत्नी ने श्रीमहापूर्ण स्वामीजी का अपमान किया, जिसकी वजह से श्रीमहापूर्ण स्वामीजी दुःखित होकर अपने परिवार के साथ श्रीरंगम वापस चले गए। हमारे पूर्वाचार्यों ने श्रीमहापूर्ण स्वामीजी के जीवन की ऐसी बातें अपने श्रीसूक्तियों में लिखी हैं, जिसे अब प्रस्तुत करेंगे।

कहते हैं कि श्रीमहापूर्ण स्वामीजी सदगुणों के भण्डार हैं और श्रीरामानुजाचार्य के प्रति असीमित लगाव था। जब उनकी बेटी को अलौकिक सहायता की जरुरत थी, तब इसके हल के लिये अपनी बेटी को रामानुजाचार्य के पास जाने का उपदेश देते हैं।

एक बार श्रीरामानुजाचार्य अपने शिष्यगण के साथ चल रहे थे, तब अचानक श्रीमहापूर्ण स्वामीजी उनको दण्डवत प्रणाम करते हैं। तब श्रीरामानुजाचार्य इसको स्वीकार समर्थन नहीं करते क्योंकि अपने आचार्य का किसी भी शिष्य को प्रणाम स्वीकार नहीं करना चाहिये। इस क्रिया से सभी शिष्य आश्चर्य चक्ति होते देखर श्रीरामानुजाचार्य अपने आचार्य से पूछते हैं कि उन्होंने ऐसा क्यों किया। तब श्रीमहापूर्ण स्वामीजी कहते हैं कि श्रीरामानुजाचार्य में वह अपने आचार्य श्रीयामुनाचार्य को देखते हैं, इसीलिये उन्होंने दण्डवत् प्रणाम किया। वार्तामाला में एक विशेष वचन सूचित हैं कि आचार्य को अपने शिष्य के प्रति बहुत सम्मान होना चाहिए और श्रीमहापूर्ण स्वामीजी उस वचन के अनुसार रहे हैं।

श्रीमहापूर्ण स्वामीजी श्रीमारनेरीनम्बि जो शूद्र होने के बावजूदभी श्रीयामुनाचार्य के शिष्य हुए और फिर एक महान श्रीवैष्णव बनने का अन्तिम संस्कार करते हैं जब वह परपदम को प्रस्थान हुए। इस क्रिया का समर्थन अधिक

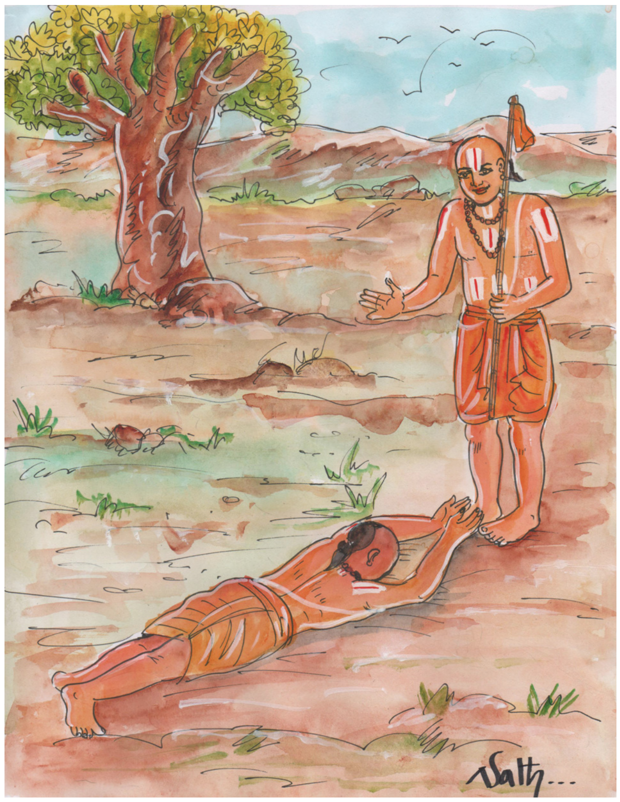

श्रीवैष्णव नहीं करते और वे श्रीरामानुजाचार्य को इस घटना के बारें में बताते हैं। यह जानकर जब श्रीरामानुजाचार्य श्रीमहापूर्ण स्वामीजी से पूछते हैं तब श्रीमहापूर्ण स्वामीजी कहते हैं कि उन्होंने सीधा आळ्वार की श्रीसूक्तियों तिरुवाय्मोळि - पयिलुम् चुडरोळि ३.७ और नेडुमार्क्कडिमै ८.१० का पालन किया और यही श्रीअळगिय मनवाळ पेरुमाळ्नायन्मार अपने आचार्य हृदय में कहते हैं और यह हमारे गुरुपरंपरा प्रभावम् में भी है।

एक बार पेरियपेरुमाळ को कुछ कुकर्मियों से खतरा था। यह जानकारी प्राप्त कर श्रीवैष्णव निश्चय करते हैं कि श्रीमहापूर्ण स्वामीजी ही सही व्यक्ति हैं जो देवालय की प्रदक्षिणा कर सकते हैं। तब वह श्रीकूरेश स्वमीजी को अपने साथ प्रदक्षिणा करने को बुलाते हैं क्यों कि श्रीकूरेश स्वमीजी ऐसे एक मात्र भक्त थे जिनको परतन्त्रता का दिव्य स्वरूपज्ञान मालूम था। यही विषय नम्पिळ्ळै। १०.७) अपने तिरुवाय्मोलि५ ईडु व्याख्यान में बताते हैं।

इसके पश्चात् एक बार शैवराजा ने श्रीरामानुजाचार्य को अपने दरबार में आंमत्रित किया, जिसके समाधान में श्रीकूरेश स्वामीजी (श्रीरामानुजाचार्य के वेष में) और बूढे श्रीमहापूर्ण स्वामीजी उनके साथ गए। यह शैवराजा को

श्रीरामानुजाचार्य के प्रति सद्भावना नहीं होने के कारण अपने अनुचरों को आज्ञा देते हैं कि श्रीरामानुजाचार्य की आँखें नोच लें, तब श्रीमहापूर्ण स्वामीजी राजी होकर स्वयं को समर्पित करते हैं और उनकी आँखें नोच ली जाती हैं। अपनी वृद्धावस्था होने के कारण श्रीमहापूर्ण स्वामीजी परमपदम को प्रस्थान करते हैं। कहते हैं कि उनके अन्तिम समय के इस घटना से एक सीख मिलती है। श्रीकूरेश स्वामीजी और श्रीमहापूर्ण स्वामीजी की बेटी कहती है कि जैसे भी हो आप अपने प्राणों को न त्यागें क्योंकि श्रीरंगम अधिक दूर नहीं है, यानि वह अपने प्राण तभी त्याग करें जब वह श्रीरंगम पहुँचे। यह सुनकर श्रीमहापूर्ण स्वामीजी तुरन्त रुकने को कहते हैं और फिर कहते हैं अगर इस घटना को लोग कुछ इस प्रकार समझेंगे कि अपने प्राणों का त्याग श्रीरंगम् में करना जरुरी है, तब वह एक श्रीवैष्णव के वैभव को सीमित करने के बराबर है और यह कदाचित भी नहीं होना चाहिये। अतः वह वहीं अपने प्राणों का त्याग करते हैं।

आळ्वार कहते हैं - ''वैकुण्थमागुम् तम् ऊरेल्लाम्'' यानि जहाँ श्रीवैष्णव रहते हैं वहीं वैकुण्ठ हो जाता है। अतः हमारे लिये यह जरुरी है कि हम जहाँ भी हो भगवान पर पूर्णनिर्भर रहें क्योंकि ऐसे कुछ लोग जो दिव्यदेशों में रहने के बावजूद नहीं समझते कि उनपर भगवान की असीम कृपा और प्रशंशनीय आशीर्वाद है और इसके विपरीत में ऐसे श्रीवैष्णव हैं जो सदैव भगवद्चिंतन में रहते हैं।

अतः हम देख सकते हैं कि श्रीमहापूर्ण स्वामीजी कितने उत्कृष्ट श्रीवैष्णव थे और वह भगवान पर पूरी तरह निर्भर थे। श्रीसहस्रगीति और श्रीशठकोप स्वमीजी के प्रति असीमित लगाव के कारण उन्हें परांकुशदास के नाम से जाना जाता है। उनके तनियन से हमें यह पता चलता है कि वह भगवान श्रियःपति के कल्याण गुणों में इतने निमग्न थे कि वे इस दिव्यानुभव से सुखी और संतुष्ठ थे।

श्रीमहापूर्ण स्वामीजी की तनियन

धनुर ज्येष्ठा समुभ्दूतं यामुनांघ्रि समाश्रयम।
यतीन्द्र प्रथमाचार्यम महापूर्णमहं भजे।।
कमलापति कल्याण गुणामृत निषेवया
पूर्ण कामाय सततम् पूर्णाय महते नमः।।

।।श्रीस्वामीजी का मंगल हो।।
।।श्रीलालजी का मंगल हो।।

श्री गोविंदाचार्य स्वामीजी (एम्बार)

- श्रीमती अनिता रमाकांत दरक, मोबाइल - ८९८५२३९३१३

रामानुज पदच्छाया गोविन्ददाह्वानपायिनी।

तदायत्तस्वरूपा सा जीयान्मद्विश्रमस्थली।।

अवतार स्थल : मधुरमंगलम्

तिरुनक्षत्र : पुष्यमास पुनर्वसु

आचार्य : श्री शैलपूर्ण स्वामीजी

शिष्य : श्रीपराशर भट्टर, श्रीवेदव्यास भट्टर

परमपद प्रस्थान स्थल : श्रीरंगम्

रचना : विज्ञान स्तुति, एम्पेरुमानार वडि वळगु पासुर (पंक्ति)

अवतार : श्रीगोविन्दचार्य कमलनयनभट्टर् और द्युतिमती के पुत्र हुए। इनका अवतार मधुरमंगलम में हुआ। ये श्री रामानुज स्वामीजी के मौसेरे भाई भी हैं। गोविन्द भट्टर, गोविन्ददास, गोविन्द पेरुमाळ, एम्बार और रामानुज पदच्छाया के नामों से भी जाने जाते हैं।

श्री रामानुज स्वमीजी की रक्षा

एक दिन यादवप्रकाश ने रामानुजाचार्य का छल से वध करने हेतु गंगा स्नान के लिये प्रयाण चलनेके लिये आमन्त्रित किया। मातासे आज्ञा लेकर श्री रामानुजाचार्य यादवप्रकाश के साथ चल दिये। श्री गोविन्दाचार्यजी को यादवप्रकाश की योजना का पता था, अतः रामानुजाचार्य की रक्षा करने हेतु वे भी साथ में चल दिये। गोविन्दाचार्य ने रामानुजाचार्य को बताया, ''भैय्या! गंगा स्नान के बहाने आपको मारनेके लिये लेके जा रहे हैं, अतः आप को यहाँ से निकल जाना चाहिए। श्री रामानुजाचार्य वहाँ से यादवप्रकाश का साथ छोडकर निकल गये।

श्री शैलपूर्णाचार्य स्वामी का गोविन्दाचार्यजी को श्रीवैष्णव बनाना

श्री गोविन्दाचार्य माया से प्रभावित होकर कालहस्ति में शिव आराधना करने लगे थे। उनके उज्ज्ञीवनार्थ रामानुजाचार्य ने श्रीशैलपुर्णाचार्य को पत्र लिखा। श्रीशैलपुर्णाचार्य ने कुछ शिष्यों के साथ कालहस्तिपुर के लिये प्रस्थान किया। जिस जलाशय में गोविन्दाचार्य स्वमीजी सहस्रागीती का कालक्षेप सुनाने लगे, वहीं शिवजी की सेवा के लिये पुष्प चुनने गोविन्दाचार्य आये और २४ वीं गाथा में सुना, ''जिन भगवान विष्णु के नाभि कमल से ब्रह्मा उत्पन्न होते हैं, जो चराचर समस्त

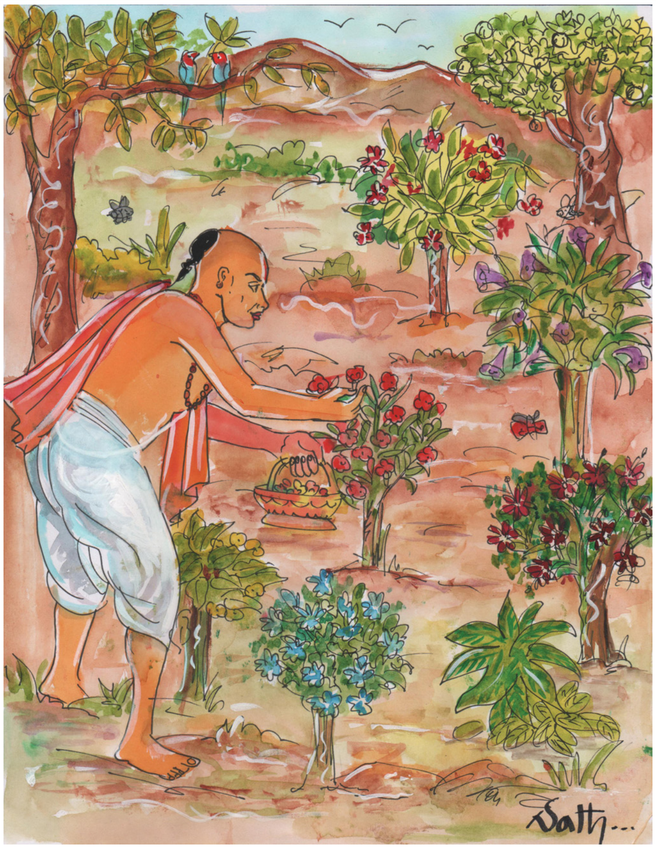

जगत् के एकमात्र कारण हैं, जो समस्त कल्याणगुणाकर अखिलदेय प्रत्यनीक दो चिह्नों को धारण करते हैं, उनको छोडकर दूसरे देवता की पूजा के लिये पुष्प चयन उचित नहीं हैं।''

तत्पश्चात् श्रीशैलपूर्णाचार्य ने आलवन्दार स्तोत्र का एक श्लोक 'स्वाभाविकानवधिकातिशयेशितृत्वं नारायणः त्वयिन मृष्यति वैदिक कः ब्रह्मा शिवः शतमखः परमस्वराड़ित्येतेऽपि यस्य महिमार्णवविप्रुषस्ते' लिखकर गोविन्दाचार्य के मार्गमें डाल दिया। इस श्लोक से गोविन्दाचार्य अत्यन्त प्रभावित हुए तथा उन में जिज्ञासा जागृत हुई। उनका श्रीशैलपूर्ण स्वामीजी के साथ संवाद हुआ। संवाद में निरुत्तर होकर गोविंदाचार्य नें त्वरित उन पुष्पोंको फेंककर श्रीशैलपुर्णाचार्य स्वामीजी के चरणोंमें गिरकर कहने लगे, ''मैं भटक गया हूँ।''

इतर शिवभक्तोंके बुलानेपर भी गोविन्दाचार्य उनके साथ नहीं गये। उन शिवभक्तोंने श्रीशैलपुर्णाचार्य स्वामीजी का विरोध किया। उसी रात्रि में शिवजी ने उन शिवभक्तोंके स्वप्न में आकर यह आदेश दिया कि, ''आज पृथ्वीपर शेषजी के अंशसे रामानुजाचार्य, गरुडजी के अंशसे गोविन्दाचार्य, और पाञ्चजन्य के अंशसे दाशरथि अवतार लिये हैं।''

यह बात शिवभक्तोंने श्रीशैलपुर्णाचार्य से क्षमा याचना करते हुये सहर्ष उन्हें गोविन्दाचार्य को सौंप दिया। तत्पश्चात् श्रीशैलपुर्णाचार्य स्वामीजी ने श्रीगोविन्दचार्य का विधिवत् पञ्चसंस्कार करके, सहस्रगीति का अध्ययन कराकर अर्थपंचक विज्ञान को बतलाया।

श्री गोविंदाचार्य की आचार्य निष्ठा

१. एक बार कुछ श्रीवैष्णव गोविंदाचार्य की स्तुति कर रहे थे और गोविंदाचार्य उस स्तुति का आनन्द लेते हुए श्री रामानुज स्वामीजी की नज़र में आए। श्री रामानुज स्वामीजी ने उन्हें बताया कि अपनी प्रशंसा कभी स्वीकार नहीं करनी चाहिए और अपने आप को तुच्छ समझना चाहिए। श्री गोविंदाचार्य ने उत्तर दिया कि किसी ने उनकी स्तुति की तो वह स्तुति उन्हें नहीं, बल्कि रामानुज स्वामीजी को जाती है, क्योंकि श्री रामानुज स्वामीजी से ही उन्हें सबकुछ प्राप्त हुआ है। श्री रामानुज स्वामीजी उनके वचन स्वीकार करते हैं और उनकी आचार्य निष्ठा की प्रशंसा करते हैं।

२. पेरियाळ्वार् तिरुमोळि के अंतिम पाशुर का अर्थ श्रीवैष्णव उनसे पूछते हैं तो वे अपने को अज्ञानी बताकर श्री रामानुज स्वामीजी के श्रीपाद अपने मस्तक पर धारण करते हैं और उस पाशुर का अर्थ प्रकाशित करते हैं।

३. श्री रामानुज स्वामीजी एक बार सहस्रगीती के अर्थ को स्मरण करते हुये टहल रहे थे। उन्हें देखने मात्र से श्री गोविंददाचार्य स्वामीजी ने श्री रामानुज स्वामीजी किसका ध्यान कर रहे थे, जान लिया। इससे यह समझ आता है कि श्री गोविंदाचार्य स्वामीजी अपने आचार्य के चिंतन में दिन रात रहते हैं।

४. एक बार जब श्रीरामानुज स्वामीजी श्रीशैलपूर्ण स्वामीजी के दर्शन के लिए पधारे तो श्री रामानुजाचार्य

ने देखा कि गोविन्दाचार्य श्रीशैलपुर्णाचार्य की शय्या लगाकर उसपर प्रथम स्वयं सो लेते हैं। उनसे पूछने पर उन्होंने बताया कि गुरु की शय्यापर सोनेका फल नरक होता है, परंतु मेरे द्वारा लगाई गयी शय्यापर गुरुदेव को रात्रिभर बिना किसी क्लेश के अच्छी नींद आये तो मुझे नरक ही हो तो हानि नहीं।

श्री गोविंदाचार्य का आचार्य विरह

रामानुजाचार्य ने श्रीरंगम् के लिये प्रस्थान करते समय गोविन्दाचार्य को शैलपूर्ण स्वामीजी से माँगकर साथ लेलिया। एक बार गुरु के विरह में गोविन्दचार्य के सूखे हुये अंगों को देखकर यतिराज ने उन्हें श्रीशैलपुर्णाचार्य का दर्शन करके आनेके लिये कहा। श्रीशैलपुर्णाचार्य स्वामीजीने उन्हें दर्शन न देकर रामानुजाचार्य की सेवा में ही पूर्णनिष्ठा भाव से रहनेकी कठोर आज्ञा दी। फिर गोविन्दाचार्य श्रीरंगम् लौट आये। गुरुदेव की सेवा ही भागवत सेवातुल्य माननेवाले श्री गोविन्दाचार्यजी श्रीशैलपुर्णाचार्य स्वामीजी का स्मरण करके उनके समान ही श्री रामानुजाचार्य में श्रद्धा रखते हुये अनन्य भाव से उनकी अहर्निश सेवा करने लगे।

श्री गोविन्दाचार्य की विरक्ति और सन्यास ग्रहण

एकबार गोविन्दाचार्य की माँ आकर उनसे कहने लगी कि अब तुम्हारी पत्नी ऋतुमति हुयी है अतः तुम घर चलो। यतिराज की सेवा में संलग्न गोविन्दाचार्य नहीं माने तो उनकी माँ ने यह बात रामानुजाचार्य से बताई। रामानुजाचार्य ने उन्हें आश्रम धर्म का पालन आवश्यक बताते हुए पत्नी के साथ अधःकार में एकान्तवास करने की आज्ञा प्रदान की। गुरु-आज्ञा पाकर घर तो आगये किन्तु पत्नी के साथ रात्रिभर ज्ञान वैराग्य की बातें करते रहें। रामानुजाचार्य ने कारण पूछा तो गोविन्दाचार्य बोले कि ''अन्तर्यामी भगवान के प्रकाश से रात्रिभर अन्धःकार का नामोनिशान नहीं रहा।'' रामानुजाचार्य बोले कि ''आश्रमधर्म का पालन करना चाहिए। गृहस्थ धर्मोपयोगी भोग्य वस्तुओं में भोग्यता बुद्धि न करके कैंकर्य बुद्धि करनी चाहिए। अनाश्रमी पतित हो जाता है। यदि गृहस्थ आश्रम धर्म में विरक्ति होगयी है तो आपको शीघ्र ही सन्यास लेना चाहिए।''

गोविन्दाचार्य के सन्यास के लिये प्रार्थना करनेपर उनकी सन्यासाश्रम में निष्ठ देखकर रामानुजाचार्य ने उन्हें सन्यासाश्रम में दीक्षित किया। उनको ''मन्नाथ'' नामसे विभूषित किया। मन्नाथ यह रामानुजाचार्य का नाम होनेसे गोविन्दाचार्य ने इस नाम को स्वीकार नहीं किया। फिर रामानुजाचार्य ने मन्नाथ का ही पर्याय ''एम्बार'' नाम गोविन्दाचार्य को प्रदान किया।

विशेष सूचना

वैकुंठ-एकादशी

वैकुंठ-एकादशी पावन पर्व के संदर्भ में तिरुमल - दिव्यक्षेत्र में श्री वेंकटेश भगवान का दस-दिन वैकुंट-द्वार का विशेष दर्शन की अवधि समाप्त हो चुकी है। अब सामान्य सर्व दर्शन लागू हो चला है। भक्त-लोग इस पर ध्यान दें।

श्री भक्तिसार स्वामीजी

- श्रीमती शंकुंतला उपाध्याय

मोबाइल - ८९८५२३९३१३

मघायां मकरे मासे, चक्रांश भार्गवोद्भवम्।

महीसार पुराधीश भक्तिसार महं भजे।।

तिरुनक्षत्र : मकर मास, मघा नक्षत्र

अवतार स्थल : महिसारपुरम (तिरुमलीशै)

आचार्य : श्री विश्वक्सेनजी, श्री महद्योगी स्वामीजी

शिष्य : श्री कणीकृष्ण स्वामीजी

परमपद स्थल : कुंभकोणम्

भगवान श्रीकृष्ण ने जैसे कारागार में जन्म लेकर गोकुल मे लालन, पालन, संवर्धन प्राप्त किया वैसे ही श्री भक्तिसार स्वामीजी का अवतार हुआ। भार्गव ऋषि के द्वारा कनकांगी के गर्भ से वैभव नामक संवत्सर के मकरमास की कृष्णपक्ष दशमी, गुरुवार, मघा नक्षत्र के दिन तुला लग्न में भगवान के श्रीसुदर्शन चक्र के अंश से श्री भक्तिसार स्वामीजी का अवतार हुआ और बेंत के सामान बनाने वाले के गृह में उनका लालन पोषण हुआ। बिना दुग्धपान एवं अन्य किसी प्रकार का आहार लिये, यह बालक सदैव परमानन्द-रत रहकर भगवान का गुणानुवाद करता हुआ, प्रातःकालीन सूर्य की भाँति दिनोंदिन बढने लगा और भक्तिसार के नाम से संसार में प्रसिद्ध हुआ।

श्री महद्योगी स्वामीजी के द्वारा तत्वोपदेश

भक्तिसार स्वमी को भगवत प्राप्ति की चिंता सताने लगी। तब उन्होंने अनेक मत एवं शास्त्रों का अवलोकन करके यह निश्चय किया कि सभी मत सारहीन हैं और अंततोगत्वा वे शैवमत में दीक्षित हो गए। भगवान की कृपा से श्री महद्योगी ने उनके वृत्तांत को सुनकर उन्हें शिक्षा देने की अभिलाषा की। श्री महद्योगी स्वामीजी ने कहा कि जगत कारण परब्रह्म परमात्मा को न जानने से आप इधर-उधर भटक रहे हैं। तब शिव भक्त श्री भक्तिसार यह सुनकर बोले कि - आप स्वयं को तत्वज्ञ एवं मुझको तत्व से अनभिज्ञ कर रहे हैं। तब श्री महद्योगी स्वामीजी ने समझाया कि परतत्व कौन हो सकते हैं और कौन नहीं?

शिवजी भस्म और बाघ का चर्म धारण करते हैं एवं रुद्राक्ष की माला पहनते हैं तथा उनकी जटायें बढ़ी हुई हैं। ब्रह्मा की आकृति यज्ञीय स्त्रुवा और कुशाओं से संयुक्त हाथवाली, समस्त पावन तीर्थों के जल से पूरित कमंडलु वाली, अक्षमाला से विभूषित, वेदपाठ सम्पन्न और श्री रंगधाम की सेवा में संलग्न महनीय का ध्यान करने वाली है। उपर्युक्त शिव एवं ब्रह्मा की आकृतियों से ज्ञात होता है कि इनकी इच्छा पूर्ण हुई है। चन्दन चर्चित अंग, दोनों तरफ श्रीदेवी भूदेवी शोभायमान, भुजपाश में लक्ष्मीजी सुशोभित, किरीट, नूपुर आदि

आभूषणों से विभूषित सुंदर शरीर, कुंतल केश युक्त भगवान श्री विष्णु की आकृति है। शास्त्रों का मनोयोग पूर्वक विचार एवं मंथन करने से यह ज्ञात होता है कि परतत्व भगवान श्रीलक्ष्मीनारायण ही है।

इस प्रकार श्री महद्योगी ने पराशरादि मुनियों के समान शास्त्रार्थ की रीति से तर्कयुक्त अनेकों वैदिक एवं शास्त्रीय प्रमाण देकर श्रीमन्नारायण ही परात्पर वस्तु है, यह निर्णय किया, जिसको श्रवण कर संशयों से रहित एवं संतुष्ट होकर श्री भक्तिसारयोगीजी उनके शिष्य बन गये। श्री महद्योगी ने विश्वक्सेन भगवान की कृपा से श्री भक्तिसारयोगी का समाश्रयन किया और अष्टांगयोग तथा शरणागति की शिक्षा प्रदान की।

श्री भक्तिसार सूरी का रुद्र को पराजित करना

एक बार शिवजी एवं पार्वती आकाश भ्रमण कर रहे थे, तब श्री सूरी का अपरिमित प्रभाव देखकर श्री पार्वतीजी ने श्री शंकरजी से श्री सूरी का प्रभाव जानने और उनके सन्निकट में आने की इच्छा व्यक्त की। तदनंतर शंकरजी एवं पार्वतीजी ने वहाँ पर पधारकर अभीष्ट वरदान देने की इच्छा जताई। इस पर श्री सूरी बोले कि मुझे आप से कोई प्रयोजन नहीं है। इस पर शंकरजी को महान क्रोध हुआ और श्री सूरी को, भस्म कर देने की इच्छा से अपने तीसरे नेत्र को खोलकर प्रलयंकारी दाह को उन्होंने उत्पन्न किया। रुद्र के तीसरे नेत्र से उत्पन्न उस दाह को देखकर श्री सूरी ने अपने दाहिने पैर के अंगूठे से त्रैलोक्य को भी भस्म कर देने वाले दाह को उत्पन्न किया जो श्री शंकर के नेत्र से उत्पन्न दाह से करोडों गुना अधिक थी। श्री सूरी द्वारा उत्पन्न इस दाह के कारण श्रीरुद्र, पार्वती के साथ अपने को अत्यंत व्याकुल अनुभव करने लगे।

श्रीसूरी के इस प्रभाव को देखकर रुद्र को अत्यंत आश्चर्य हुआ और प्रसन्नता भी हुई। उन्होंने उनका नाम भक्तिसार रखा और उनकी बारम्बार प्रशंसा करके पार्वती से बोले कि भागवतों का प्रभाव वर्णनातीत होता है। अतः हे गिरिजे भागवत त्रैलोक्य मे दुर्जेय होते हैं।

श्री भक्तिसार योगी का प्रभाव

१) श्री भक्तिसार योगी के विलक्षण वैभव को सुनकर एक समय में आयुर्वेद रस शास्त्र के अद्भुत विद्वान 'श्रीकोंकन सिद्ध' उनके समीप आये और इस शास्त्र के अनुसार अपने द्वारा निर्मित की हुई सिद्ध गुटिका उनको भेंट की। श्री भक्तिसार योगी ने इस परम गुटिका के गुणो के संबंध मे पूछा तो कोंकण सिद्ध बोले कि इसके स्पर्श मात्र से ही लोह स्वर्ण बन जाता है। सिद्ध के मुख से गुटिका की प्रशंसा सुनकर स्वामीजी ने उस गुटिका की उपेक्षा करते हुए अपने हाथों से अपने शरीर को मला और उससे निकली हुई मैल की गोली बनाकर कोंकण सिद्ध को देते हुए कहा कि इस गुटिका के संस्पर्श से पत्थर भी सोना बन जाता है। योगिराज ने इस गुटिका की परीक्षा लेने के लिये उसे सामने के पर्वत पर फेंक दिया और उसके स्पर्श मात्र से वह पर्वत सोने का बन गया। इस सुवर्ण गिरि को देखकर कोंकण सिद्ध विस्मित हुए और अपनी सिद्धि का अभिमान तज कर उनको प्रणाम कर वहाँ से चले गये।

२) अपने जन्म स्थल महिसार में तिलक करने की श्वेत मृत्तिका का अभाव देखकर भक्तो के अभीष्ट की पूर्ति करनेवाले दयानिधान श्री वेंकटेश भगवान आपके सम्मुख उपस्थित हो गये और उन्होंने कहा कि " हे योगियो! कांचीपुरी में सरोयोगी आलवार के जन्म स्थल की श्वेत मृत्तिका से ऊर्ध्वपुंड्र धारण कीजिये। भगवान की आज्ञा को शिरोधारी कर योगिराज कांचीपुरी गये और वहाँ की मृत्तिका से तिलक धारण करके भूसार क्षेत्र मे आये और यहाँ श्री जगन्नाथ भगवान को प्रणाम कर अष्टांग योग साधना में कुछ समय बिताया।

३) योगिराज ने एक समय में भगवान को प्रणाम कर लोकानुग्रह में तत्पर हो उनसे विज्ञापन किया कि "आप मेरे लिये तथा सभी प्राणियों के लिये सदा प्रत्यक्ष होते हुए, सर्वदा यहीं पर निवास कीजिये।" भगवान श्रीमन्नारायण भक्तिसार की प्रार्थना को स्वीकार कर आज तक कांचीपुरी में विराजमान हैं। सब जगह भगवान विष्णु दाहिनी करवट से सोते हैं, परंतु यहां कांची में भक्त भक्तिसार के लिये भगवान श्री यथोक्तकारी बाएँ भाग से शयन कर रहे हैं।

४) एक बार कुंभकोणम् मंदिर के दीक्षितजी ने उनको यज्ञशाला में विप्रमंडली के बीच उनको उच्चासन पर बैठाकर उनकी पूजा की, जिससे वहाँ के प्रमुख जन क्रोधित होगए। तब भक्तिसार स्वामीजी ने अपने हृदय कमल स्थित शेषशायी शंख चक्र आयुधों से विभूषित भगवान का ध्यान किया। भक्त के द्वारा प्रार्थित भगवान श्रीपति भक्तिसार के शिरोभाग के मध्य में प्रकट हो गए, जगत्पति भगवान को प्रत्यक्ष देखकर सभी ने साष्टांग प्रणाम किया और विरोध करने वाले, योगिराज के चरणों पर गिरकर अपने अपराध के लिये क्षमा याचना की।

स्वामीजी श्री सीतारामचार्यजी महाराज, वैकुंठ मंडप, अयोध्या द्वारा रचित छन्दः -

श्री भक्तिसार प्रचार भक्ति ज्ञान के करतार हो,

कणीकृष्ण के आचार्य श्रीपति चक्र के अवतार हो।

आलवार लखी निष्ठा तुम्हारी चकित गिरिजापति भये,

तुम स्वामी भुजवा भामिनी को सिद्ध सुर कामिनी किये।।

भक्तिसार स्वामीजी ने २ दिव्य प्रबंधों की रचना की जिसमे २१६ गाथाएँ हैं। प्रथम प्रबंध-चतुर्मुखादि नाम से प्रसिद्ध है जिस में १६ गाथायें हैं और दूसरा श्री चंद्रवृत के नाम से विख्यात है जिस में १२० गाथाएँ हैं। भक्तिसार स्वमीजी ने इस में ११ निम्नलिखित दिव्यस्थलों की प्रशंसा की है। १. श्रीरंगम् २. वेंकटाद्रि ३. विक्षारण्य ४. कांची के यथोक्तकारि भगवान ५. ज्ञानगेह ६. शेषगेह ७. कैर्वनी के श्री पार्थसारथी ८. कुम्भकोणम् ९. कपिस्थान में श्रीगर्जतीहार १०. प्रेमपुर में श्री सुंदरराग ११. महापुर।

हृदय कमल में भक्ति सहित निरंतर भगवान का ध्यान करते हुए भक्तिसार स्वामीजी ने २३०० साल तक कुंभकोणम में निवास किया एवं ३७०० वर्ष तक भूतल पर निवास किया। इस से पूर्व उन्होंने २००० वर्ष तक का समय अन्यान्य स्थलों में प्रचार किया। उन्होंने आजीवन अन्नादि आहार का परित्याग कर मात्र दुग्धाहार ही ग्रहण किया।

'मानव सेवा ही... माधव सेवा'

आर्ष धर्म में बताया गया है।

सह प्राणियों को किसी भी तरह रक्षा की जाय, तो अनंत पुण्यफल हमें और हमारे परिवार को मिलेगा। कलियुग वैकुण्ठ के भगवान का आवास स्थान तिरुमल में रक्तदान करना परम पवित्र कार्य है।

आपके रक्त से अन्य व्यक्ति का प्राण बचता है।

तिरुमल में रक्तदान कीजिए।

तिरुमल अश्विनी अस्पताल में प्रतिदिन सुबह 8 बजे से लेकर दोपहर 12 बजे के अंदर कोई भी रक्तदान कर सकता है।

दूरभाष - 0877-2263601

आइये... रक्तदान कीजिए!
संकटग्रस्त व्यक्ति को सहायता कीजिए!!

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

जनवरी २०२१

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार
					1	2
3	4	5	6	7	8	9
10	11	12	13	14	15	16
17	18	19	20	21	22	23
24	25	26	27	28	29	30
31						

फरवरी २०२१

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार
	1	2	3	4	5	6
7	8	9	10	11	12	13
14	15	16	17	18	19	20
21	22	23	24	25	26	27
28						

मार्च २०२१

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार
	1	2	3	4	5	6
7	8	9	10	11	12	13
14	15	16	17	18	19	20
21	22	23	24	25	26	27
28	29	30	31			

जनवरी - २०२१

०१ अंग्रेजी नव वर्ष
०६-१२ श्री आण्डाल-नीराट्टोत्सवम्
१३ भोगी, भोगीतेरु
१४ मकर संक्रांति
१५ कनुमा, श्री गोदादेवी का परिणयोत्सव
२६ भारतगणतंत्र दिवस
२८ श्री रामकृष्ण तीर्थमुक्कोटि

फरवरी - २०२१

११ श्री पुरंदरदास आराधनोत्सवम्
१३-२१ देवुनि कड़पा श्री लक्ष्मीवेंकटेश्वरस्वामी का ब्रह्मोत्सव
१९ रथसप्तमी, भीष्म अष्टमी
२०-२६ तिरुपति श्री गोविंदराजस्वामी का प्लवोत्सव
२३ भीष्म एकादशी
२७ कुमारधारा तीर्थमुक्कोटि

मार्च - २०२१

०२-१० श्रीनिवासमंगापुरम् श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामी का ब्रह्मोत्सव
०४-१३ तिरुपति श्री कपिलेश्वरस्वामी का ब्रह्मोत्सव
११ महाशिवरात्रि
१३-२१ तिरुपति श्री कोदंडरामस्वामी का ब्रह्मोत्सव
२०- २८ तरिगोंडा श्री लक्ष्मीनरसिंहस्वामी का ब्रह्मोत्सव
२४-२८ तिरुमल श्री बालाजी का प्लवोत्सव
२८ लक्ष्मीजयंती, तुंबुरुतीर्थमुक्कोटि

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

अप्रैल २०२१

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार
				1	2	3
4	5	6	7	8	9	10
11	12	13	14	15	16	17
18	19	20	21	22	23	24
25	26	27	28	29	30	

मई २०२१

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार
						1
2	3	4	5	6	7	8
9	10	11	12	13	14	15
16	17	18	19	20	21	22
23	24	25	26	27	28	29
30	31					

जून २०२१

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार
		1	2	3	4	5
6	7	8	9	10	11	12
13	14	15	16	17	18	19
20	21	22	23	24	25	26
27	28	29	30			

अप्रैल - २०२१

०८ अन्नमााचार्यवर्धंती
१३ श्री प्लवनाम संवत्सर उगादि
१४ श्री मत्स्यजयंती, तमिल नूतन वर्ष
१६ -२४ वायलपाडू श्री पट्टाभिरामस्वामी का ब्रह्मोत्सव
१८ श्रीरामानुजजयंती
१९ श्रीरामजयंती
२१ श्रीरामनवमी
२१-२९ ओंटिमिट्टा श्री कोदंडरामस्वामी का ब्रह्मोत्सव
२४ -२६ तिरुमल बालाजी का वसंतोत्सव
२६ से मई ०४ तक नागलापुरम् श्री वेदनारायणस्वामी का ब्रह्मोत्सव

मई - २०२१

१४ अक्षयतृतीया, परसुराम जयंती
१७ श्रीशंकराचार्यजयंती
१८ तिरुपति गंगजातरा (मेला)
१८-२६ तिरुपति श्री गोविंदराजस्वामी का ब्रह्मोत्सव
२०-२२ तिरुमल श्री पद्मावती श्रीनिवास का परिणयमहोत्सव
२३-३१ ऋषिकेश, नारायणवनम् श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामी का ब्रह्मोत्सव
२४-२७ तिरुचानूर श्री पद्मावतीदेवी का वसंतोत्सव
२५ श्री नरसिंह जयंती, तरिगोंडा वेंगमांबा जयंती, श्री अन्नमाचार्य जयंती
२६ श्री कूर्म जयंती

जून - २०२१

०२-१० कार्वेटिनगरम् श्री वेणुगोपालस्वामी का ब्रह्मोत्सव
०४ हनुमज्जयंती
१९-२७ तक अप्पलायगुंटा श्री प्रसन्नवेंकटेश्वरस्वामी का ब्रह्मोत्सव
२०-२५ तिरुचानूर श्री पद्मावतीदेवी का प्लवोत्सव
२२-२४ तिरुमल श्री बालाजी का ज्येष्ठाभिषेक
२९ से जूलई ०१ तिरुचानूर श्रीसुंदरराजास्वामी का अवतारोत्सव

जुलाई २०२१

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार
				1	2	3
4	5	6	7	8	9	10
11	12	13	14	15	16	17
18	19	20	21	22	23	24
25	26	27	28	29	30	31

अगस्त २०२१

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार
1	2	3	4	5	6	7
8	9	10	11	12	13	14
15	16	17	18	19	20	21
22	23	24	25	26	27	28
29	30	31				

सितंबर २०२१

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार
			1	2	3	4
5	6	7	8	9	10	11
12	13	14	15	16	17	18
19	20	21	22	23	24	25
26	27	28	29	30		

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

जुलाई - २०२१

१३-१५ श्रीनिवासमंगापुरम् श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामी का साक्षात्कार वैभव
१६ तिरुमल आणिवर आस्थान
१९-२१ तिरुपति श्री गोविंदराजस्वामी का ज्येष्ठाभिषेक
२०-२३ तिरुपति श्री कपिलेश्वरस्वामी का पवित्रोत्सव
२४ गुरुपूर्णिमा-व्यासजयंती

अगस्त - २०२१

०८ श्री चक्रत्ताल्वार वर्षतिरुनक्षत्रम्
११ अन्डाल तिरुवादिपूरम्
१२ नागचतुर्थी
१३ गरुड पंचमी
१५ भारत स्वतंत्रता दिवस
१६ मातृश्री तरिगोंडा वेंगमांबा वर्धंती
१७-२० तिरुमल श्रीबालाजी का पवित्रोत्सव
२० वरलक्ष्मीव्रत
२२ श्री हयग्रीव जयंती, श्री विरवनसाचार्य जयंती, राखी
२३ गायत्रीजप
३० श्रीकृष्ण जन्माष्टमी, गोकुलाष्टमी

सितंबर - २०२१

०८ श्री बलराम जयंती
०९ श्री वराह जयंती
१० श्री गणेश चतुर्थी
१५ -१८ तिरुपति श्री गोविंदराजस्वामी का पवित्रोत्सव
१७ श्री वामन जयंती
१८-२१ तिरुचानूर श्री पद्मावतीदेवी का पवित्रोत्सव
१९ श्री अनंतपद्मनाभव्रत

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

अक्तूबर २०२१

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार
					1	2
3	4	5	6	7	8	9
10	11	12	13	14	15	16
17	18	19	20	21	22	23
24	25	26	27	28	29	30
31						

नवंबर २०२१

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार
	1	2	3	4	5	6
7	8	9	10	11	12	13
14	15	16	17	18	19	20
21	22	23	24	25	26	27
28	29	30				

दिसंबर २०२१

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार
			1	2	3	4
5	6	7	8	9	10	11
12	13	14	15	16	17	18
19	20	21	22	23	24	25
26	27	28	29	30	31	

अक्तूबर - २०२१

०६ -१५ तिरुचानूर श्री पद्मावतीदेवी का नवरात्री उत्सव
०७-१५ तिरुमल श्री वेंकटेश्वरस्वामी का नवरात्री ब्रह्मोत्सव
११ तिरुमल बालाजी का नवरात्री गरुडसेवा
१२ सरस्वतीपूजा
१३ दुर्गाष्टमी
१४ महानवमी
१५ विजयदशमी

नवंबर - २०२१

०३ नरक चतुर्दशी
०४ दीपावली, श्री केदारगौरीव्रत
०८ नागुलचविति
११ तिरुमल बालाजी का पुष्पयाग
१६ कैशिकद्वादशी आस्थान
३० से दिसंबर-८ तक
तिरुचानूर श्री पद्मावतीदेवी का ब्रह्मोत्सव

दिसंबर - २०२१

०२ धन्वन्तरीजयंती
०४ तिरुचानूर श्री पद्मावतीदेवी का गजवाहन सेवा
०८ पंचमीतीर्थ
०९ तिरुचानूर श्री पद्मावतीदेवी का पुष्पयाग
१४ गीताजयंती
१५ श्री चक्र तीर्थ मुक्कोटि
१६ धनुर्मास आरंभ
१८ श्री दत्तजयंती

विष्णुसहस्रनाम का महत्व

- डॉ.के.सुधाकर राव
मोबाइल - ७३८२६१२९९३

सभी दुःखों से विमुक्त होने का मार्ग एक ही है। वह विष्णुसहस्रनाम का पाठ करना। भीष्म ने युधिष्ठिर को यह रहस्य बताया था। विष्णुसहस्रनाम का महत्व क्या है? इस विषय के बारे में जानना आस्तिकों के लिए महत्वपूर्ण है।

'विष्णु' शब्द का अर्थ व्यापन शील है। पूरे ब्रह्माण्ड में विष्णु का तेज व्याप्त है। हमारे दस इन्द्रिय, मन, बुद्धि, सत्व, तेज, बल एवं धृति (धैर्य)- यह सब वासुदेवात्मक माने जाते हैं। क्षेत्र (शरीर) एवं क्षेत्रज्ञ (आत्मा) दोनों भी विष्णुस्वरूप हैं।

इन्द्रियाणि मनो बुद्धिः सत्त्वं तेजो बलं धृतिः।
वासुदेवाहम् कान्याहुः क्षेत्रं क्षेत्रज्ञ एव च।।

योग, ज्ञान, सांख्य सभी विद्याएँ, शिल्प-रचना, वेद, शास्त्र- ये पूरा विज्ञान, ज्ञान जनार्दन से ही प्राप्त होता है। चराचर विश्व भगवान् विष्णु के नियंत्रण में है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष- ये चार पुरुषार्थ हैं। विष्णुसहस्रनाम के पाठ मात्र से इन चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति होती है।

विष्णु के भक्तों में काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर- इन दुर्गुणों का प्रभाव नहीं होता। इन दुर्गुणों का नाश हो जाता है।

आगम शास्त्रों में आचार को प्राथमिकता दी गई है। आचार से धर्म उत्पन्न होता है। उस धर्म के प्रभु अच्युत है। विष्णुसहस्रनाम के पाठ के लिए चार वर्णों का भी पूर्ण अधिकार है। भीष्म कहते हैं-

वेदान्तगो ब्राह्मणः स्यात् क्षत्रियो विजयी भवेत्।
वैश्यो धनसमृद्धः स्यात् शूद्रः सुखमवाप्नुयात्।।

अर्थात् - विष्णुसहस्रनाम के पाठ मात्र से विप्र वेदान्त के रहस्यों को जान सकता है। क्षत्रिय अपने सभी कार्यों में सफलता प्राप्त करता है। वैश्य धनसमृद्धि को प्राप्त करता है। शूद्र सुखी बन जाता है। सांसारिक तापत्रयों को नष्ट करने का एक मात्र उपाय विष्णुसहस्रनाम का पाठ ही है।

अन्य स्तोत्रों की अपेक्षा विष्णुसहस्रनाम अत्यन्त शक्तिशाली है। और इस कलयुग में सभी कामनाओं को पूर्ण करने वाला एक कल्पवृक्ष के समान है। जिसको जो चाहिए उसको वह मिलेगा ही। इस में कोई संदेह नहीं।

किसी को धन की कमी रहती है। पूर्वजन्म के कर्मों के प्रभाव से दरिद्रता की पीडा से बहुत सारे लोग ग्रस्त होते हैं। धन के बिना कोई भी कार्य, चाहे

लौकिक हो या पारलौकिक हो, संपन्न नहीं होता। लेकिन इस दरिद्रता को समाप्त करने का एक मात्र उपाय विष्णुसहस्र नाम है। विष्णु के हृदय में लक्ष्मी का वास है। अतः भगवान् विष्णु को प्रसन्न करने से भगवती लक्ष्मी भी प्रसन्न हो जाती है। जैसे सूर्य के प्रकाश में अंधकार नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार, लक्ष्मी की प्रसन्नता प्राप्त होने पर नूतन रूप से धनागम के स्रोत बढ़ जाते हैं। फल स्वरूप आय में वृद्धि होती है।

विष्णु सहस्र नाम का प्रत्येक नाम या शब्द मंत्रतुल्य है। ग्रहदोषों का निराकरण करने में यह स्तोत्र अत्यन्त प्रभावशाली है। नीच स्थानों में विद्यमान ग्रहों से मनुष्य को संकटों का सामना करना पड़ता है। कुछ लोग गंभीर रोग से पीड़ित रहते हैं। उनके पास चिकित्सा के लिए पर्याप्त धन भी उपलब्ध नहीं होता। स्थिति में उस मरीज के परिवार के सदस्य दुःखी हो जाते हैं।

शास्त्रों में कहाँ जाता है कि भगवान् विष्णु सबसे बड़े वैद्य है। वे भवरूपी (संसार) रोग को नष्ट कर देते हैं। इस प्रकार की स्थिति में संकल्प कर यदि विष्णु सहस्रनाम का पाठ किया जाय तो मृत्युतुल्य संकट से विमुक्ति जरूर मिलेगी। जब शरीर जीर्ण हो जाता है, व्याधिग्रस्त हो जाता है, तब उस मरीज को गंगाजल पिलाना ही शुभ है। भगवान् विष्णु या नारायण ही श्रेष्ठ वैद्य कहलाते हैं।

इसी का उल्लेख निम्न श्लोक में किया गया है -

शरीरे जर्जरी भूते व्याधिग्रस्ते कळेबरे।
औषधं जाह्नवीतोयं वैद्यो नारायणो हरिः।।

विष्णु भगवान् पवित्रों में पवित्र कहलाते हैं। मंगल कारक देवताओं में प्रथम गण्य हैं। सब के पिता के समान हैं। पूरे विश्व का नियंत्रण करने में सक्षम है।

वेदव्यास ऋषि विष्णु सहस्रनाम के लेखक हैं। विष्णु सहस्रनाम पाठ करने से पहले स्नान करें। शुद्ध वस्त्र

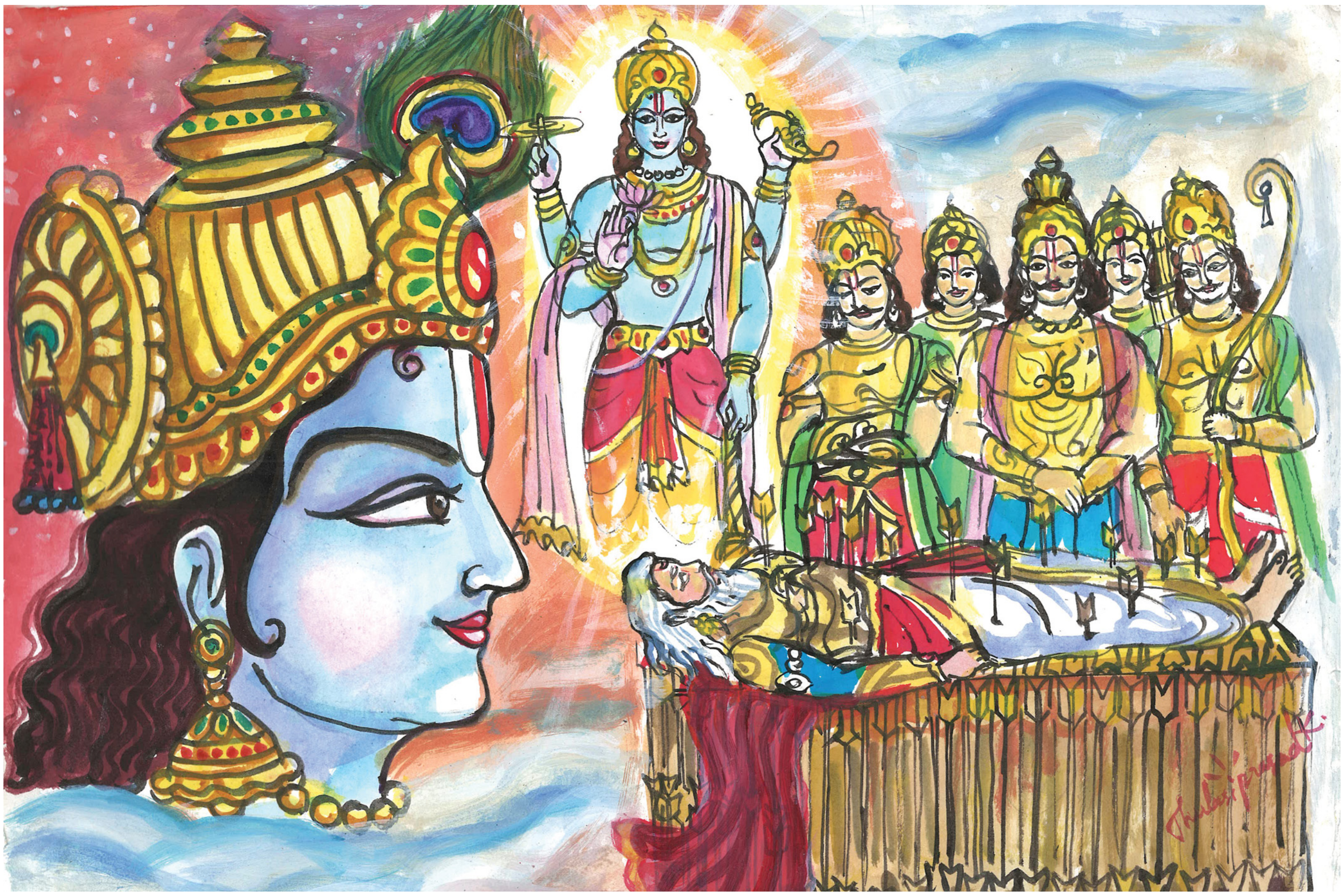

पहनें तथा आसन पर बैठ कर पूजा करें। उसके बाद संकल्प करें। और शुद्ध उच्चारण के साथ विष्णु सहस्रनाम का पाठ करें। संक्रमण काल में, ग्रहण के समय और अन्य शुभ मुहूर्तों में इस का पाठ कर सकते हैं। पाठ यांत्रिक न हो। पूरी आस्था, श्रद्धा के साथ हज़ार नामों का पाठ करने से मनोवांछित फल प्राप्त कर सकते हैं।

आप सभी त्रिगुणों से भली-भान्ति परिचित हैं। सत्व, रज, एवं तमो गुण - इन तीनों से पूरा विश्व चलता है। विष्णु सत्वगुण प्रधान देवता है। अतः विष्णु की उपासना करने से सात्विकता की बढ़ोत्तरी होती ही है।

आपाधापी के इस युग में सब का जीवन यांत्रिक हो चुका है। बहुत सारे लोग पारिवारिक समस्याओं से ग्रस्त हैं। पारिवारिक समस्याओं से ग्रस्त हैं। कुछ लोग प्रतिकूल परिस्थितियों में जीवन चला रहे हैं। इस प्रकार के जीवन में मन की शांति नहीं के बराबर है। इस प्रकार की विषम परिस्थितियों से बचने का एक मात्र उपाय विष्णु सहस्र नाम का पाठ। समस्या की तीव्रता के अनुसार पाठ करना चाहिए। छोटी सी समस्या के समाधान के लिए एक बार पाठ करना पर्थाप्त है। लेकिन गंभीर समस्याओं में ११ बार या २१ बार सहस्रनाम का पठ करना उचित है। अगर साधक खुद पाठ करने में असमर्थ है, तो किसी पंडित के माध्यम से पाठ करवा सकते हैं। पाठ करते समय अंगन्यास, करन्यास का होना अनिवार्य है। पूर्णिमा के अवसर पर विष्णु सहस्रनाम का पाठ अत्यंत शुभदायक है। तिरुपति जैसे विष्णु क्षेत्रों में इस महत्वपूर्ण स्तोत्र का पाठ शीघ्रफलदायी है।

विशेषज्ञों का कहना है कि विष्णु सहस्रनाम का प्रत्येक नाम विशेष कामना को पूर्ण करता है। निम्न लिखित श्लोक का प्रत्येक नाम ऐश्वर्य की वृद्धि में सहायक है।

श्रीदः श्रीशः श्रीनिवासः श्रीनिधिः श्रीविभावनः।
श्रीधरः श्रीकरः श्रेयः श्रीमान् लोकत्रयाश्रायः।। (६५)

'श्रीदः' का अर्थ है ऐश्वर्य को प्रदान करने वाला। धन प्रदाता। कान्ति प्रदाता। इस शब्द को यदि एक मंत्र के रुप में जपते हैं तो धनागम की वृद्धि निश्चित है।

''ओं श्रीदाय नमः'' यही मंत्र बन जाता है। बाकी शब्दों को चतुर्थी प्रत्यय जोड़कर मंत्र बना सकते हैं।

इसी प्रकार निम्न मंत्रों का जाप हो सकता है।-

ओं श्रीशाय नमः, ओं श्रीनिवासाय नमः, ओं श्रीनिधये नमः, ओं श्री विभावनाय नमः, ओं श्रीधराय नमः, ओं श्रीकराय नमः, ओं श्रेयसे नमः, ओं श्रीमते नमः, ओं लोकत्रयाश्रयाय नमः

इन में से साधक अपनी इच्छानुसार एवं सुविधानुसार किसी भी मंत्र का चयन कर, जप कर सकते हैं। विष्णुसहस्र नाम का प्रत्येक नाम अत्यन्त शक्तिशाली है। जब एक मंत्र से ही अभीष्टसिद्धि होती है, तब पूरे हजार नामों का पाठ करना सहस्राधिक फलदायक है। श्रद्धा एवं विश्वास की महती आवश्यक है।

ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति के लिए विष्णु सहस्रनाम का निम्नलिखित श्लोक का पाठ करना चाहिए।

ब्रह्मण्यो ब्रह्मकृत् ब्रह्म ब्रह्मा ब्रह्मविवर्धनः।
ब्रह्मवित् ब्राह्मणो ब्रह्मी ब्रह्मज्ञो ब्राह्मण प्रियः।। (७१)

प्रत्येक नक्षत्र के लिए प्रत्येक श्लोक का पाठ करने की प्रथा भारत में विद्यमान है। कुल २७ नक्षत्रों के लिए विभिन्न श्लोकों का पाठ कर सकते हैं। योग्य गुरु के माध्यम से हम नक्षत्रानुसार पाठ की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

विष्णु को 'जिष्णु' कहा गया है। इस शब्द का अर्थ 'जयशील'। विष्णु ने लोक कण्टक राक्षसों का वध किया था। धरती के बोझ को कम करने की चेष्टा की थी। आसुरीशक्तियों पर विजय प्राप्त करने की अभिलाषा जिन साधकों में है, उनको विष्णुसहस्र नाम का पाठ आवश्यक रूप से करना ही है।

विष्णु भगवान की विशिष्टता यह है कि वे लौकिक अभिलाषाओं, महत्वाकांक्षाओं की आपूर्ति तो करते ही हैं। अन्त में मोक्ष प्रदान करते हैं। आध्यात्मिक मार्ग में प्रगति प्राप्त करने के लिए, ध्यान, धारणा, समाधि-जैसी विभिन्न भूमिकाओं के विभिन्न आयामों को स्पर्श करने के लिए विष्णु सहस्र नाम अत्यन्त उपयोगी साबित हो चुका है।

कुल मिलाकर, विष्णु सहस्रनाम का पाठ करना लौकिक या पारलौकिक दृष्टि से पूर्णता को प्राप्त करने का एक सरल, प्रशस्त मार्ग है। नित्य पूजा पाठ के साथ-साथ विष्णुसहस्रनाम का पाठ भी करने से जीवन की विसंगतियों, विरोधाभासों का निराकरण संभव है। कलियुग के प्रत्यक्षदेवता भगवान् श्री वेंकटेश्वर साक्षात् विष्णु ही है। श्री बालाजी की कृपा प्राप्त करने हेतु प्रत्येक व्यक्ति विष्णु सहस्रनाम का सहारा लेसकता है।

तिरुमल में दर्शनीय क्षेत्र

स्वामिपुष्करिणी : मंदिर के निकट स्थित यह तालाब अतिपवित्र है। यात्री मंदिर में प्रवेश करने के पूर्व इसमें स्नान करते हैं। आत्मा व शरीर की शुद्धि के लिए यहाँ स्नान करना श्रेष्ठ है।

आकाश गंगा : मंदिर की उत्तरी दिशा में लगभग ३ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

पापविनाशनम् : मंदिर की उत्तरी दिशा में ५ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

वैकुंठ तीर्थ : मंदिर की ईशान दिशा में लगभग ३ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

तुम्बुरु तीर्थ : मंदिर की उत्तरी दिशा में १६ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

भूगर्भ तोरण (शिलातोरण) : यह अपूर्व भूगर्भ शिलातोरण मंदिर की उत्तरी दिशा में १ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

ति.ति.दे. बगीचे : देवस्थान के आध्वर्य में सुंदर व आकर्षक बगीचे लगे हुए हैं, जिन में विशिष्ट पेड व पौधे मिलते हैं।

आस्थान मंडप (सदस हाल) : यहाँ धर्म प्रचार परिषद् के आध्वर्य में धार्मिक कार्यक्रम मनाया जाते हैं। जैसे भाषण, संगीत-गोष्ठी, हरिकथा-गान एवं भजन।

श्री वेंकटेश्वर ध्यान ज्ञान मंदिर (एस.वी. म्यूजियम्) : इस कलात्मक सुंदर भवन में एक म्यूजियम्, ध्यान केंद्र तथा छायाचित्र-प्रदर्शिनी आयोजित है।

ध्यान केंद्र : तिरुमल के एस.वी. म्यूजियम् एवं वैभवोत्सव मंडप में स्थित ध्यान केंद्रों में भगवान पर ध्यान केंद्रित कर भक्त शांति को प्राप्त कर सकते हैं।

गतांक से

श्री रामानुज नूट्रन्दादि

मूल - श्रीरंगामृत कवि विरचित

प्रेषक - श्री श्रीराम मालपाणी
मोबाइल - ९४०३७२७९२७

अर्भुतन् शेम्मै यिरामानुजन्, एन्नैयाळ वन्द
कर्प्पकम् कत्तवर् कामरु शीलन्, करुदरिय
पर्प्प ल्लुयिर्हळुम् पल्लुलहु यावुम् परनदेन्नुम्
नर्प्पोरुळ् तन्नै, इन् नानिलत्ते वन्दु नाट्टिनने ॥५३॥

मदुज्जीवनार्थमेवावतीर्णः परमोदारो ज्ञानाधिकमत्पुरुषस्पृहणीय-सद्गुणशेवधिराश्चर्यचेष्टित आर्जवगुणाकारो रामानुजः 'सर्वेऽप्यात्मानस्सर्वे च लोकाः परमपुरुषशेषभूता' इत्यमुमर्थमिह भुवि प्रतिष्ठापयामास॥ (अद्वैतिनामपसिद्धान्तनिरसनमिहावधेयम्॥) मेरे उज्जीवन के लिए ही अवतीर्ण, परमोदार, ज्ञानियों के वांछनीयशील-गुणवाले, अत्याश्चर्य-मय दिव्य चेष्टितवाले और आर्जव (सीधापन) गुणवाले श्री रामानुज स्वामीजी ने इस भूतल पर अवतार लेकर इस महार्थ की स्थापना की कि ये असंख्य आत्मवर्ग और (इनके निवासस्थान) ये सभी लोक भगवान की मिल्कियत हैं। (इससे अद्वैत मत का निरास सूचित किया जाता है।)

क्रमशः

(गतांक से)

सियाराम ही उपाय

शरणागति मीमांसा

(षष्टम खण्ड)

सियाराम ही उपेय

मूल लेखक
श्री सीतारामाचार्य स्वामीजी, अयोध्या

प्रेषक
दास कमलकिशोर हि. तापडिया
मोबाइल - ९४४९५१७८७९

१०३

श्रीमते रामानुजाय नमः

"जो कभी प्रतिग्रह नहीं लेता याने तीर्थ में निवास करके जो अन्न, द्रव्य, वस्त्र, गाय वगैरह संकल्प की हुई वस्तु कभी नहीं ग्रहण करता; जिसमें धन का, जन का, विद्या का, जाति का, और भी किसी बात का अहंकार नहीं है। यद्दच्छा लाभ से जो सन्तुष्ट रहता है तीर्थ बास का फल उसको प्राप्त होता है।"

"जो दूसरे की बेटी बहिन को अपनी बेटी बहिन के समान जानता है याने पर-स्त्री को जो माता के समान मानता है, कभी व्यभिचार में प्रवृत्त नहीं होता है, अपनी इन्द्रियों को बश में रखा है तथा सब दोषों से रहित है, स्वप्न में भी जिसका मन विषयों की तरफ नहीं जाता है, जिस में क्रोध का लेश भी नहीं है, जो कभी झूठ नहीं बोलता है, दूसरे के दुःखों से दुःखी होता है, सब जीवों पर दया रखता है, किसी का भी मान, बड़ाई, वैभव देखकर प्रसन्न होता है, ईर्ष्या, बैर, चुगली से दूर रहता है, ऐसे अधिकारी को तीर्थवास का फल प्राप्त होता है।"

कहने का तात्पय यह है कि साधन स्वरूप भक्तियोग का प्रसंग सुनने में तो प्रिय लगता है, परन्तु जब उसके नियमों पर बिचार किया जाता है तो सच्चे मुमुक्षु का जो घबड़ाता है, जैसे पुरी के निवास से, पुरियों में मरण से, जरूर मोक्ष मिलता है। यह सुनकर मुमुक्षु बहुत प्रसन्न होते हैं। परन्तु पुरियों के निवास करने वाले अधिकारियों को किस तरह से रहना चाहिए, धामों में निवास करने वाले कैसे अधिकारी को मोक्ष मिल सकता है इस बात की जब शर्त सुनते हैं और उसको जब अपने में मिलाते हैं तो "झंझट रहित कौनसा सीधा उपाय है जिसको पकड़ने से शीघ्र मुक्त हो जाऊँ" ऐसा सोचने लगते हैं।

श्री देवराज गुरु कहते हैं कि महात्माओ! साधन स्वरूप सारे कर्म-काण्डों में तथा ज्ञान-योग में और भक्तियोग में मन आदि इन्द्रियों को वश में करने की सख्त शर्त है। श्रीगीताशास्त्र का यह अटल सिद्धान्त है कि जिसका मन बुद्धि काबू में नहीं है उस अधिकारी से किया हुआ किसी प्रकार का भी साधन सिद्ध होता ही नहीं है। जगत में साधन करने वाले अधिकारियों की कमी नहीं है। साधनयोग में लाखों ऐसे अधिकारी हैं कि टाइम भी काफी खर्च करते हैं, द्रव्यादिक भी बहुत लगा रहे हैं। शारीरिक कष्ट भी करते ही हैं। परन्तु फल भाग में प्रायः बञ्चित देखे जाते हैं। इसका मूल कारण यही है कि मन, इन्द्रियाँ किसी के काबू में नहीं हैं, इससी से बहुत परिश्रम से भी किया हुआ साधन-योग पूर्ण रूप से किसी का सिद्ध हो नहीं पाता है। जब सिद्ध ही नहीं हो पाता है, तो पूर्ण रूप से फल देने में कैसे समर्थ हो सकता है। जैसे पथ्य से रहने वाले को ही किसी भी औषधि का सेवन लाभ दायक हो सकता है वैसे जो अपने मन इन्द्रियों को वश रखने में समर्थ होंगे उन्हीं का किया हुआ साधन-योग पूर्ण रूप से फल देने में समर्थ होगा और जिनकी इन्द्रियाँ काबू में नहीं हैं वे करोड़ों जन्म में भी न साधन को सिद्ध कर पायेंगे न साधनों के जरिये मिलने वाले फलों के भागी होंगे। मेरा यह कहना नहीं है कि साधन स्वरूप भक्ति योग नहीं करना चाहिये या इस से फल नहीं मिलता है। जो अधिकारी पूर्णरूप से सिद्ध करेगा उसे अवश्य मिलेगा। परन्तु साधन भक्तियोग की

सभी शर्तों को पालन करके संसार बन्धन से छूट जावे ऐसे अधिकारी तो भूमण्डल में दुर्लभ मालूम हो रहे हैं। इसका यह मतलब नहीं है कि कोई साधन स्वरूप भक्ति योग करे ही नहीं। जिससे जितना बने उतना करे परन्तु इतना तो शास्त्रों का कहना है कि जो साधन भावना से करेगा उसको उसके सारे नियमों का पालन करना पड़ेगा तभी वह फल का भागी बन सकेगा और यदि शर्तों के पालन किये बिना साधन-भावना से कर्म, ज्ञान, भक्ति में जो प्रवृत रहेगा, उसका साधन योग कब सिद्ध होगा और उसके जरिये कब फल प्राप्त होगा इसका निर्णय कोई नहीं कर सकता। एक शरणागति योग ही इस प्रकार का सब के लायक सरल और सीधा और अचूक वेदान्तादि सच्छास्त्रों से निर्णय किया हुआ उपाय है कि जिसके जरिये शर्तिया कह सकते हैं कि श्री भगवान के श्री चरणों में शरणागति करके रहने वाले याने श्री भगवान को निर्हेतुक कृपा का सहारा बन्धन छूट जायेगा और उन्हें अवश्य सदा के लिये श्री भगवान की नित्य सेवा भी प्रास हो जायगी। स्वतन्त्रता पूर्वक साधन भावना से नवधा भक्ति के करने में अनेक झंझटें हैं और उस में से कतृत्व भावना और साधन भावना छोड़ के भगवान की आज्ञा तथा कैंकर्य मान के करते रहें और संसार बन्धनों से छूटकर श्री भगवान की नित्य सेवा में जाने के लिये इतरावलम्ब त्याग पूर्वक पड़ा रहे इस में किसी प्रकार का झंझट नहीं है। शास्त्रों का बारम्बार यही कहना है कि भगवान की निर्हेतुक कृपा को उपाय मानकर रहने वाले अधिकारी के लिये जन्म मरण की बला से छूट कर परमपद में चला जाना अत्यन्त सहज बात है। अपने कर्त्तव्य के बल से परमपद जाने की आशा रखना इसको साधन स्वरूप भक्तियोग कहते हैं और श्री भगवान की निर्हेतुक कृपा के भरोसे संसार बन्धन से छूट कर परमधाम मिलने को जो आशा रखना है इसीका नाम शरणागति है।

पहिले से इसी बात की मीमांसा करते आ रहे हैं कि संसार बन्धन से छूटकर इस जीव को श्री वैकुण्ठधम में चले जाने के लिए कितने प्रकार के उपाय हैं और उन उपायों में से सबके लायक, सीधा, शीघ्र फल देने वाला, अचूक कौनसा उपाय है। इसी के प्रसंग में पहले शरणागति मीमांसा में साधन स्वरूप कर्मयोग, ज्ञानयोग, भक्तियोग का स्वरूप अच्छी तरह भली भाँति वर्णन कर आये हैं और साधन स्वरूप इन तीन योगों में कितनी कठिनाइयाँ हैं इस बात को भी अच्छी तरह, शास्त्रों के द्वारा

निर्णय कर चुके हैं और ये भी कह चुके हैं कि काल, कर्म, गुण, स्वभाव के परवश रहने वाले हम जीवों के लिए साधन स्वरूप तीन योगों की शर्तों का पालन करना महा अशक्य है। साधन स्वरूप इन तीन योगों के भरोसे पर कब मोक्ष मिलेगा इस बात का कोई निश्चय नहीं है। इसी से तो बड़े बड़े पहुँचे हुए महात्मा लोग उसके स्वरूप को समझने के बाद उसकी आशा छोड़कर झट श्री भगवान की शरणागति की तरफ आ जाते हैं। इसका कारण यही है कि शरणागति में किसी प्रकार का झंझट नहीं है। श्री भगवान की शरणागति करके चाहे कोई भी क्यों न हो इसी जन्म के अन्त में अवश्य परमधाम जा सकता है। यह शरणागति योग सबके लायक, स्वरूपानुरूप, परतन्त्र स्वरूप के अनुगुण उपाय है और इतरावलम्ब त्याग पूर्वक जो कोई श्रीभगवान के शरणागति-योग का अवलम्ब लेवे, उस अधिकारी के लिए शास्त्रों का यही कहना है कि इसी जन्म के अन्त में उसका अवश्य संसार बन्धन छूट जायेगा।

क्रमशः

भागवत कथा सागर

त्रिपुरासुर का संहार

तेलुगु मूल - डॉ.वैष्णवाँघ्रि सेवक दास

हिन्दी अनुवाद - श्री पी.वी.एस प्रसाद
मोबाइल - ९८६६२७०३०१

नारद महामुनि ने बताया है, जो मनुष्य भागवत-श्रेष्ठ प्रह्लाद का चरित, हिरण्यकशिपु की वधा, नृसिंहदेव की लीलाओं को श्रद्धा से सुनता है, वह चिंता रहित भगवद्धाम निश्चय ही पहुँच जाता है। इसके बाद वह प्रह्लादचरित को अत्यंत श्रद्धा से आकर्णित होते हुए धर्मराजा का प्रोत्साहन करते हुए कहा ''धर्मराजा! देवदेव श्रीकृष्ण के सामान्य मानव की भाँति आपके घर में बसने के कारण आप (पांडव) बहुत ही भाग्यवान् हैं। इस विषय के ज्ञाता होने के नाते ऋषि और महामुनि तुम्हारे घर हमेशा आते रहते हैं, जो साधुओं के दिव्यानंदसुख हेतु बन कर है। एक बार वह देवदेव आपके सेवक, और एक बार गुरु के तौर पर होता रहेगा, जो वास्तविक तौर पर वह आपका आराध्य भी क्यों न हो। ब्रह्म-रुद्र-आदि महनीय भी श्रीकृष्ण-तत्व का पूर्ण-रुप से, युक्त ढंग वर्णित न कर सके थे। मौन, ध्यान, भक्ति वैराग्य युक्त महामुनियों के द्वारा भक्त रक्षक के तौर पर अर्चित हुए वह देवदेव आपकी तरफ प्रसन्न होकर हो!''

यह नारद-धर्मराज का संवाद साक्षात् श्रीकृष्ण के सन्निधान में ही घटा था। धर्मराज से श्रीकृष्ण की की हुई अग्रपूजा अद्भुत संदर्भ में घटे संवाद के विषय ऐसे हैं। यह संवाद श्रीमद्भागवत के सप्तम स्कन्ध में चर्चित हुआ है।

मायावी मय दानव ने शिव के यश को घटा दिया, तो उस हालत में श्रीकृष्ण ने ही महादेव की रक्षा की थी - ऐसा नारदमुनि ने बताया था। उस बात के बारे में युधिष्ठिर के कुतूहल के प्रकटन पर, नारद ने त्रिपुरासुर संहार के विषय का विवरण दिया था।

कृष्ण की करुणा से शक्ति-संपन्न देवतालोग दानवों को हराने पर, उन्होंने मयदानव को आश्रय दिया था। तब मय ने स्वर्ण, रजत, लोह निर्मित तीन पुरों को बना कर दिया था। वे असाधारण वस्तु सामग्रि पाये हुए विमानों से सारूप्य रखते थे। त्रिपुरों को पाये हुए असुरों ने बलोन्मत्त बन कर फिर से तीन लोकों में विध्वंस करना आरंभ किया था। त्रिपुर प्रभाव से असुर देवताओं के लिए अगोचर बन गये थे। अनूह्य ढंग से घटी इस विपदा पर चिंताग्रस्त देवतालोग शिवजी के पास जाकर अपने कष्टों का बयान किया था। अपने को दया से रक्षा करने की प्रार्थना की। तब परम शक्तिमान् शिव ने उन्हें अभय देकर, असुरों के बसे हुए विमान रुपी त्रिपुरों पर बाणों की वर्षा की। शिवजी के बाणों से त्रिपुर ढंक गये थे। उस में असंख्य असुरों ने प्राण खो दिये। अपनी शक्ति के ही सवाल के तौर पर परिणमित इस परिस्थिति देखे मयदानव ने शिवजी की शर-परंपरा से हत सभी असुरों को, अपने द्वारा निर्मित अमृत-कूप में गिराया! अमृत के स्पर्श के लगते ही मृत असुर सब पुनर्जीवित बन गये!! अमृत के प्रभाव से वे लोग वज्रायुध के प्रहार से भी अविच्छिन्न देहों से बाहर आये! इस पर शिवने विचारग्रस्त मनस्क बन गया था। उसे देखे विष्णुभगवान् ने मयदानव के सृजित उत्पात को रोकने का एक उत्कट उपाय सोचा था।

उस उपाय के अनुसार विष्णु ने गो-रूप का धारण किया; ब्रह्मा ने गो-वत्स का रूप धारण किया था। दोनों मिल कर त्रिपुरों में प्रवेश करते ही, विष्णुमूर्ति ने अमृतकूप के सारे अमृत का पान कर दिया। भले ही असुरों ने माया गोवत्स एवं गाय को देखने पर भी, भगवन्माया के कारण मोहित बन कर उनके कार्य को रोका न था। गाय, बछडों के द्वारा अमृत पिया हुआ वृत्तान्त सुन कर मय ने कहा कि विधि को कोई टाल नहीं सकेगा। तब देवाधिदेव श्रीकृष्ण ने स्वशक्ति से रथ, सारथी, ध्वज, अश्व, गज, धनुर्बाण, कवच आदि समस्त का सृजन कर शिव को जताया। उस ढंग से सकल समृद्ध बन शिव ने दानवों से लड़ कर, बाणों की अविरल वर्षा बना कर एक दुपहर के समय त्रिपुरों को दग्ध बनाया। उस विजय पर आनंद संभरित देवता, ऋषि,

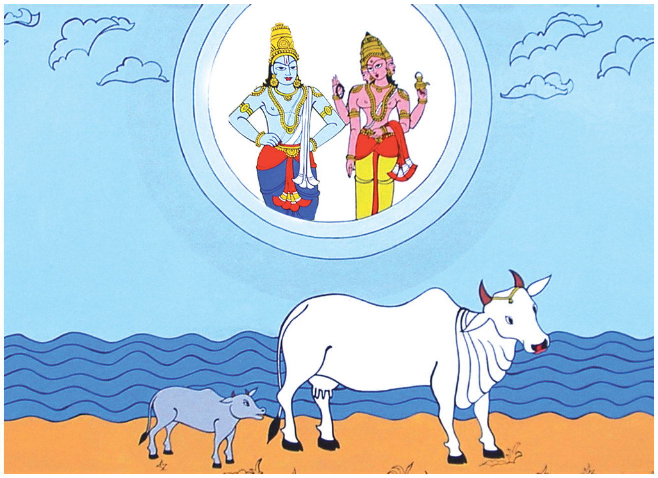

मुनि, पितृदेवता लोग, सिद्ध, साध्य गण और इतर महनीयों ने जयजय ध्वनि करते हुए शिवजी पर पुष्प - वृष्टि कर दी!! और अप्सराओं ने सानंद नृत्य किया! उस प्रकार त्रिपुरों का नाश कर शिवने त्रिपुरारि के नाम से प्रसिद्धि पायी था। तदनंतर वह ब्रह्मादि देवताओं द्वारा संपूजित बन कर अपने लोक में चला गया। श्रीकृष्ण से की हुई अद्भुत लीलाओं को प्रामाणिकों से सुनने द्वारा सब लोग पुनीत बनने का वृत्तान्त नारदमुनि ने धर्मराजा से कहा था।

प्रह्लाद वृत्तांत, त्रिपुरनाश नारद द्वारा सुने हुए युधिष्ठिर ने उस महनीय के द्वारा मानव के साधारण धर्म, वर्णाश्रम धर्मों को भी सुनना चाहा। धर्मराजा जानता है कि नारदमुनि मानवों का परम गुरु है। मानवों को भक्तियोग सिखाने के वास्ते ही नारदमुनि ने भक्ति सूत्रों का संकलन किया था। निज रुप से मानव को धर्म के बारे में, परिपूर्ण जीवन के बारे में नारदमुनि की गुरु शिष्यों की परंपरा में ही उपदेश पाना चाहिए। धर्मराजा की जिज्ञासा देख कर आंनदित नारदमुनि पहले सर्व जीव रक्षक श्रीकृष्ण को नमस्कार कर, आप नारायण से सुने हुए सनातन धर्म का विवरण करने लगा।

देवदेव श्रीहरि ही समस्त वेद-ज्ञान सार, समस्त धर्म-मूल परम प्रामाणिकों की स्मृति बन कर है। इसी को धर्म के तौर पर स्वीकारना चाहिए। इसी के आधार पर मन, आत्मा, देह के साथ समस्त संतुष्ट बनता है। सत्य, दया, तप (विशेष दिनों में उपवसित होना), दिन में दो बार स्नान करना, सब्रस्ती, अच्छा - बुरा विचक्षण, मनोनिग्रह, इन्द्रिय - निग्रह, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, दान, शास्त्राध्ययन, सरलता, संतोष, साधुजनसेवा, अनावश्यक व्यापकों का क्रम से त्याग देना, आवश्यक कार्यों की व्यर्थता को पहचानना, मौन - गम्भीर रहना, व्यर्थ प्रसंग न करना, आत्मानात्म विवेक, जीव सब को (मानवों, जंतुओं को भी) समान तौर पर खाद्यान्न देना, हर जीव को (मुख्यतया मानव को) भगवदंश मानना, भगवत्कर्मों को सुनना, कीर्तित करना, स्मरण करना, सेवा, अर्चन, वंदना, दास्य, सख्यता, आत्म निवेदन इत्यादि मानवों के लिए अनुसरित धर्म हैं। इन लक्षणों के हुए मानव देवदेव को प्रसन्न कर सकता है।

गर्भादानादि संस्कारों-द्वारा संस्करित लोग ही दिवज हैं। ऐसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों को अपने वंशाचारों-द्वारा, आचरण-द्वारा पुनीत बन कर भगवदाराधना, वेदाध्ययन, दान का परिग्रहण करना चाहिए। मनोनिग्रह, इन्द्रिय-निग्रह, तप, शुचित्व, क्षमागुण, सारल्यता, ज्ञान, दया, सत्यसंधता, भगवदाश्रय नाम के ये ब्राह्मण के लक्षण हैं। युद्ध में शौर्य, वीरता, धैर्य, तेज, त्याग, देहावसरों का नियंत्रण, क्षमा, ब्राह्मणों के प्रति अनुरक्ति, प्रसन्नता, सत्यसंधता इत्यादि क्षत्रियों के लक्षण हैं। देवता लोग, गुरु, विष्णुदेव के प्रति भक्ति होना, धर्मार्थों तथा कामों की पुरोगावि हेतु जतन करना, गुरु, शास्त्रों के वाक्यों में आस्था रखना, कुशलता के साथ धनार्जन के लिए जतन करना - वैश्यों के ये लक्षण हैं। भर्ता का सेवन, अनुकूलवती बन कर रहना, पति के बंधु - सखाओं के प्रति अनुकूलता, पति द्वारा किये जाने वाले व्रतों का अनुसरण करना नामके इन चरों व्रतों का पतिव्रता स्त्री को आचरित करना चाहिए। साध्वी स्त्री को लाभ-हीना बन कर, हर हालत में संतुष्ट बन कर होना चाहिए। गृह कलापों को दक्षता से कर सकने की क्षमता रखनी चाहिए। सत्य, प्रियवाक् बोलनेवाली होनी चाहिए; जागरूका हो; शुचि शुभ्रता पायी हुई होनी चाहिए। इस प्रकार वह अपतित पति को अनुराग के साथ सेवन करे। लक्ष्मीदेवी की तरह पति को सेवित वनिता, पति के साथ वैकुंठ जाकर, नित्यसुखी बनने की बात का नारदमुनि ने आख्यान किया था।

(गतांक से)

श्री प्रपन्नामृतम्

(१७वाँ अध्याय)

मूल लेखक - श्री स्वामी रामनारायणाचार्यजी

प्रेषक - श्री रघुनाथदास रान्दड

मोबाइल - ९९००९२६७७३

भगवान् श्रीरंगनाथ द्वारा यतिराज को विभूतिद्वय प्रदान

यतिराज रामानुजाचार्य स्वच्छ सलिला कावेरी में शिष्यों के साथ स्नान कर ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण करके मन्त्रराज का जप करने लगे, तब तक श्रीवररंगाचार्य ने आगे जाकर यतिचक्रचूड़ामणि के आगमन का शुभ समाचार श्रीरंगनाथ भगवान् को सुनाया। इस खुशखबरी को सुनकर भगवान् श्रीरंगनाथ ने पहले उनका सम्मान करके श्रीपूर्णाचार्य स्वामी को आदेश दिया कि विविध वाद्यघोषों तथा वेदपाठी वैष्णव ब्राह्मणों के साथ उनको सम्मानित करके मेरे सामने शीघ्र लाओ।

भगवान् रंगनाथ का आदेश पाकर आचार्य श्रीपूर्णस्वामीजी आदिष्ट रीति से उन्हें लेने गये। भगवान् रंगराज भी यतिराजागमनोल्लास में आगे के मण्डप में आकर बैठ गये। अपने नित्य कृत्यों को समाप्त करके श्रीरामानुजाचार्य अपनी ओर आते श्रीवैष्णव मण्डल को देखकर सशिष्य उन लोगों की ओर चले। आते हुए यतीन्द्र रामानुजाचार्य को देखकर सभी वैष्णववृन्द शीघ्र ही उनके सन्निकट में आकर साष्टांग प्रणिपात करने लगे, तो प्रयुत्तर में श्रीरामानुजाचार्य स्वामी ने भी श्रीमहापूर्ण स्वामी को साष्टांग प्रणिपात प्रतिपादन पुरस्सर सभी वैष्णवों को साष्टांग निवेदन किया। तदनन्तर श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामी को आगे करके श्रीरामानुजाचार्यजी भगवान् श्रीरंगनाथ के मंन्दिर में आये। यह मन्दिर सात परकोटों एवं अपने गोपुरों से सुशोभित था। जबकि श्रीरामानुजाचार्यजी विष्वक्सेन प्रभृति देवों की वन्दना करते हुए भगवान् की सेवा में उपस्थित हो रहे थे तो भक्तपरवश भगवान् सद्यः उपस्थित विमान पर चढ़कर योगीन्द्र श्रीरामानुजाचार्यजी के सम्मानार्थ आगे बढ़े। भगवान् रंगनाथ को आते देखकर यतीन्द्र श्रीरामानुजाचार्यजी के सम्मानार्थ आगे बढ़े। भगवान् रंगनाथ को आते देखकर यतीन्द्र श्रीरामानुजाचार्यजी साष्टांग करके बोले- ''भगवान्! मैं आपका दास हूँ, आप संसार के स्वामी हैं। अतः मेरे लिए आपका यहाँ आना उचित नहीं लगता।'' श्रीरामानुजाचार्य के प्रत्युत्तर में भगवान् बोले कि- ''यति-सार्वभौम! जिस तरह आप आये हैं, उसी तरह मैं भी आया हूँ। दोनों (लीला एवं नित्य) विभूतियों के जीवों की रक्षा करते हुए अब आप यहीं रहें। अब तक मैंने इनकी रक्षा की और अब आप इनकी रक्षा करें, यह मेरी आज्ञा है। क्योंकि मैं अब विश्राम करना चाहता हूँ। मैं आपको अपनी दोनों

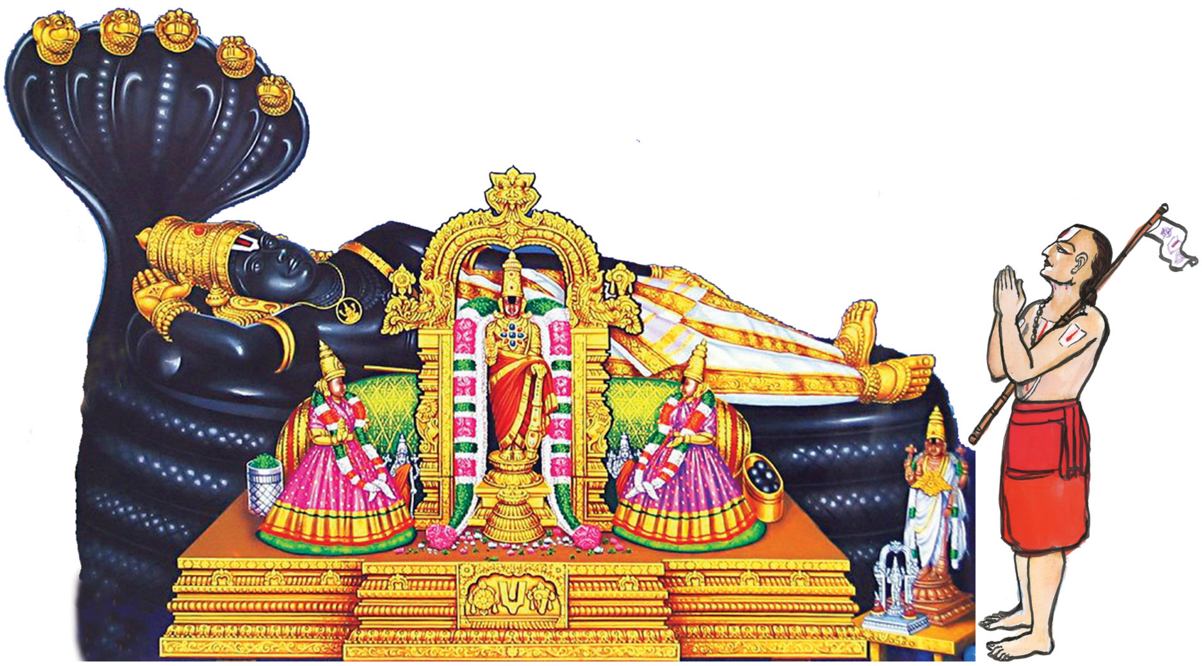

विभूतियों का अधिकार देकर आपका ''उभय-विभूतिनायक'' नाम रखता हूँ। आप अपनी इच्छानुकूल उनकी रक्षा करते हुए मेरे सन्निकट में ही रहें, यही मेरी इच्छा है।''

भगवान् रंगनाथ की वाणी को सुनकर श्रीरामानुजाचार्य अपने आचार्य श्रीमहापूर्ण स्वामीजी से बोले- ''भगवान्! यह मेरा महान् वैभव है।'' प्रत्युत्तर में श्रीमहापूर्ण स्वामीजी बोले कि- ''वैकुण्ठ से आकर श्रीशठकोप सूरि ने अपने प्रबन्ध सहस्रगीति में कहा है कि- लोक संरक्षण का काम बड़ा कठिन है। आगे चलकर भूमण्डल में सर्वजन रक्षक पुरुष का अवतार होगा। उस पुरुष के अवतरित होते ही कलि से सम्पूर्ण पाप-ताप नष्ट हो जायेंगे। आपके अवतीर्ण होने से श्रीशठकोप स्वामी के वचन पूर्ण हो गये। भगवान् श्रीरंगनाथ ने भी आपको दोनों विभूति प्रदान कर दी है। अतः श्रीमान् यहीं निवास करें।'' अपने आचार्य की वाणी सुनकर हर्ष भरित मन से श्रीयतिराज भगवान् रंगनाथ को साष्टांग प्रणिपात करके उनसे बोले- ''मैं आपका दास हूँ। श्रीमान् की आज्ञा का पालन करना मेरा श्रेष्ठ कर्त्तव्य है।'' तदनन्तर भगवान् रंगनाथ के अन्तर्गृह में प्रवेश करके श्रीरामानुजाचार्य ने कोटि-कोटि कन्दर्पदर्पदलनपटीयान् शोभामय भगवान् रंगनाथ का दर्शन करके बारम्बार साष्टांग प्रणिपात् पुरस्सर तीर्थ, श्रीशठारि प्रसाद ग्रहण किया। भगवद्दर्शन करके श्रीयतीन्द्र गरुड़-मण्डप से निकलकर भगवान् रंगनाथ के अर्चकपाचकादि प्रभृति समस्त परिकर वर्ग को देखकर बोले- ''आप लोगों को अपने-अपने कर्त्तव्यों का यथाकाल उत्तमोत्तम ढंग से पालन करना चाहिये।'' इसके बाद श्रीरामानुजाचार्यजी परकाल स्वामी द्वारा किये गये निर्माण कैंकर्यों को दर्शन करने गये और उनका श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामी द्वारा वर्णनात्मक निर्देशन पाकर मुग्ध हो गये। श्रीरंगम में ही उभय वेदान्त प्रवर्तक भगवद्भक्ति परायण, सकल वैष्णवजन रक्षक भगवान् श्रीरामानुजाचार्य अनेक संस्कारियों को भगवद्भक्त बनाते हुए तथा कालक्षेप करते हुए, श्रीरंगम् में ही रहने लगे। इस चरित्र को सुनने वाले व्यक्ति भगवान् विष्णु के लोक को अन्त में प्राप्त करते हैं।

।। श्रीप्रपन्नामृत का २७वाँ अध्याय समाप्त हुआ ।।

क्रमशः

(गतांक से)

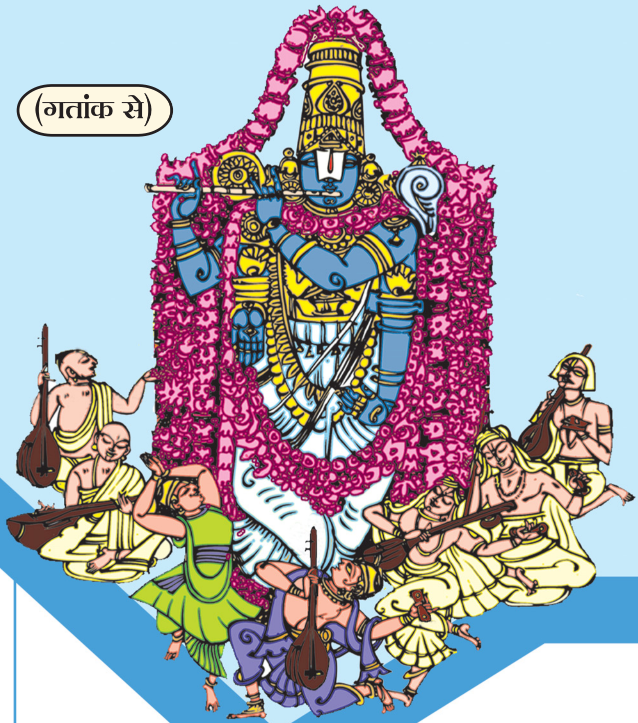

हरिदास वाङ्मय में श्रीवेंकटाचलाधीश

तेलुगु मूल - श्री एस.नागराजाचार्युलु
हिन्दी अनुवाद - डॉ.एम.आर.राजेश्वरी
मोबाइल - ९४९०९२४६१८

श्री श्रीपादरायजी के साहित्य में श्री वेंकटेश्वर स्वामी

कर्नाटक हरिदास श्रेष्ठों का स्मरण करते समय, ''नमः श्रीपादराजाय नमस्ते व्यासयोगिने। नमः पुरंदरार्य विजयार्थाते नमः'', कहकर सर्वप्रथम श्रीपादराय जी का स्मरण करना संप्रदाय के रूप में लिया जाता है। श्रीपादरायजी, श्री मध्वाचार्य की परंपरा में आनेवाले स्वर्णवर्णतीर्थ के यहाँ पले, बडे हुए। तत्कालीन चंद्रगिरि के राजा सालुव नरसिंहरायलु के हाथों सत्कार व भक्तिपूर्वक समर्पित पूजादिक को इन्होंने गौरव के साथ स्वीकार किया। तदुपरांत श्री पादराय ने श्रीनिवास भगवान की बड़ी श्रद्धा व भक्ति के साथ सेवा की और तत्समाज की प्रजा को अपनी तपोशक्ति के बल पर प्राप्त महिमाओं को दिखाया तथा उनकी समस्याओं को दूर कर उनपर अनुग्रहीत किया। उन्होंने 'वाग्वज्र' नामक ग्रंथ का प्रणयन किया, तथा द्रविड संकीर्तन रचना (कन्नड भाषा में) के लिए पद, पद्य के प्रयोग का श्रीगणेश किया। और इनके बाद आनेवाले व्यास, वादिराज, पुरंदर, कनकदास आदि के लिए दिशा निर्देश देकर, इसी क्रम में उनसे संकीर्तनों का गान करवाया और यह स्थापित किया कि श्रवण व स्मरण से इच्छापूर्ति होती है। उनके बाद वे कोलार जिले के मुलबागिलु नामक गाँव में दिव्य-भव्य वृन्दावन में चले गये। आज भी उस में श्री श्रीपादरायजी विराजमान हैं। इन्होंने कन्नड भाषा में देवी-देवताओं की स्तुतियों के साथ-साथ श्रीकृष्ण की लीलाओं का, वैराग्य उद्दीप्त कीर्तनों का, मध्व मत संबंधी संकीर्तनों का, वायुदेव के तीन अवतारों का वर्णन करने वाले लघुवायुस्तुति-रूपी मध्वनामों का कन्नड भाषा में तथा तिरुपति श्री वेंकटेश्वर स्वामी की स्तुति में संकीर्तनों का प्रणयन कर, गाया है।

उपर्युक्त स्तुतियाँ तथा संकीर्तन, सामान्य भक्तों के द्वारा गाने योग्य बनाये गये हैं। श्रीपादराय जी के कीर्तन सरल कन्नड भाषा में लिखे गये हैं। ये सभी राग-ताल व गाने के लिए योग्य तथा भावात्मक आंगिक अभिनय के अनुकूल भी लिखे गये जैसा लगते हैं। इनके कीर्तन जो 'तोडि' राग में विरचित हैं- कंगलिध्यातको कावेरि रंगन नोडद', 'वंदिपे निनिने गणनाथ', 'भूषण के भूषण इदुभूषण', 'रंगनाथननोडुव बन्नि', 'व्यर्थवल्लवे जन्मव्यर्थ वल्लके', ये सभी प्रसिद्ध बन पडे हैं। अनेक गायक इनको गाते भी ज्यादा ही हैं। 'भ्रमर गीत', तथा 'वेणुगीत' भी इनकी ही रचनाएँ हैं। ये जब भी गाये जाते हैं, तब श्रीकृष्ण का साक्षात्कार निश्चित रूप से हो

ही जाता है। बहुतेरे संगीतज्ञक 'बारो मनेगे गोविन्द' नामक कीर्तन संगीत सभाओं में गाते ही हैं। कविता के शिल्प को अत्यंत सुंदर ढंग से बनाया। भगवान तिरुपति श्री वेंकटेश्वर स्वामी पर जो कीर्तन श्रीपादरायजी से रचे गये हैं, उनकी एक झांकी यहाँ प्रस्तुत है-

''हरे वेंकट शैलवल्लभ पोरयबेकु एन्न

दुरित दूर नी नल्लदेजगदोलु पोरेवरनाकाणे निन्नाणे।।''

(हरे वेंकट शैलवल्लभ! मेरी रक्षा करो। सारे कष्टों को तुम दूर करने वाले हो। तुम्हें छोडकर इस विश्व में कोई रक्षक नहीं है। यह मेरी मति है। यह निश्चित रूप से सत्यवाक् है।)

''इंदिरेश अरविन्द नयन एन्न तन्दे-ताई नीने।

पोंदिदवर अघवृन्दवक लेव मंदराद्रि धरने ''श्री हरि ये।।''

(इंदिरेश! अरविन्दनयन! मेरे माता-पिता तुम ही हो। तुम्हारे शरणागतों के समस्त पापों को दूर करते हो। तुम मंदराद्रि को धारण करते हो, तुम कूर्माकार देव हो।)

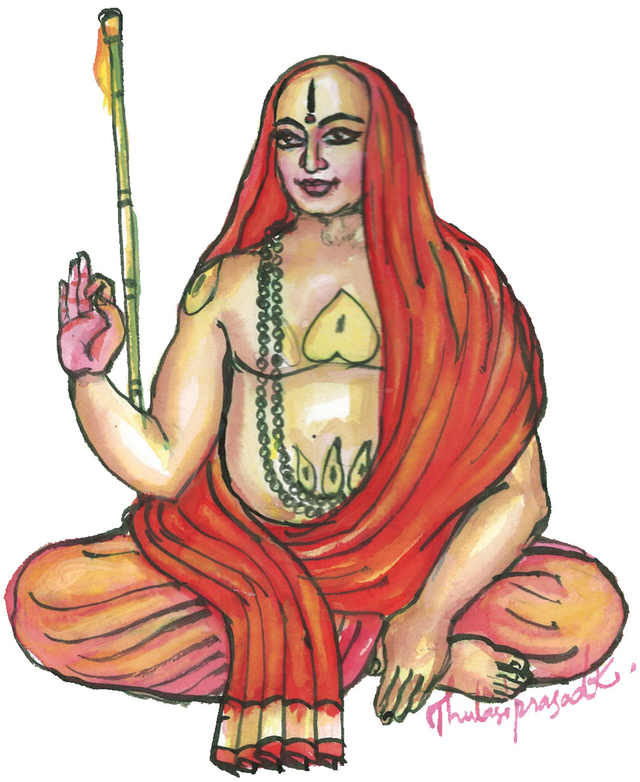

''आरुनिन्न होरतेन्न पोरेवरो नीरजाक्ष हरिये अ

पारमहिम पुराण पुरुष घोर दुरितगल दूरमाडिसो।।''

(तुम्हें छोड़कर, कोई मेरी रक्षा नहीं कर सकता। तुम महिमासंपन्न दैव हो, पुराण पुरुष हो, नीरजाक्ष (कमल रूपीनयनवाले) हो। हे हरि! मेरे समस्त पापों को दूर करो, स्वामी।)

''मंगलांग महनीय गुणार्णव गंगोदित पाद।

अंगजपित अहिराजशैय्या श्रीरंग विठल दोरेये श्रीहरिये।।''

(मंगलांग, महान गुणोंवाले, गंगोदित-पाद, मन्मथजनक, अहिराज-शैय्या पर विराजमान हे श्रीरंगविठल, श्रीहरि, मेरी रक्षा करो, हे प्रभू।)

इस संकीर्तन में श्रीनिवास की स्तुति के द्वारा श्रीहरि के लीलवतारों की ओर संकेत करने वाले विशेषणों (शब्दों) का प्रयोग हुआ है।

क्रमशः

भगवद्गीता और नौजवान

गीता-संस्कृति में आगे कदम

तेलुगु मूल - डॉ.वैष्णवाँघ्रि सेवक दास

हिन्दी अनुवाद - श्री टि.वेंकटेश्वर्लु

मोबाइल - ९४४१२५४०६१

भगवद्गीता का नाम न सुना हुआ भारतीय विरले ही होगा। केवल भारतीय ही नहीं, बल्कि कई पाश्चात्यवासी अनेक शताब्दियों से गीता के बारे में सुन चुके, लाभान्वित हुए। गीताध्ययन, गीता-संस्कृति में बहुत कुछ भेद है। भगवद्गीता के बारे में जानना या पढना गीताध्ययन हो, तो उसे जीवन में आचरित करना गीता-संस्कृति जाना जाता है। श्रीकृष्ण भगवान् के गीता-बोधन करने से शिष्य के रूप में अर्जुन ने गीता के संदेश को भली-भाँति आकलन कर लिया है। वह अध्ययन के दायरे में आ जाता है, जिसे ज्ञान कहा जाता है। वही गीता-ज्ञान है।

मगर, जब गीता-ज्ञान आचरण में रखा जाता है, वह विज्ञान या आचरणात्मक ज्ञान या गीता-संस्कृति होगा। गीता-ज्ञान के पाने के बाद अर्जुन ने अंततोगत्वा अपने अभिप्राय बताते हुए, ''प्रभो कृष्ण! मेरा मोह टल गया है; मेरी संस्कृति पुनः आ गयी है; मैं अभी स्थिमित पड़ गया हूँ; मेरे शक सब हट गये; तुम्हारे कहे के अनुसार अब मैं करुँगा,'' कहा था। मतलब, गीता-संदेश को वह आचरण में रखने के वास्ते सन्नद्ध हो गया है। केवल आचरण में रखने पर ही भगवद्गीता अद्भुत फल देता है। मगर, ऐसा आचरण अपने नस-नस में जीर्णित हो जाने पर वही संस्कृति कहलाती है।

इतने पर, संस्कृति क्या है? रास्ते में जाता हुआ व्यक्ति मंदिर के आते ही, एक क्षण रुक कर प्रणाम करके जाना उसकी संस्कृति है। वर्षगाँठ के दिन बालक नये कपड़े पहन कर, माँ-बाप को प्रणाम करना उसे सिखायी हुई संस्कृति है। बड़ों के प्रति आदर दिखाना भी संस्कृति ही है। ऐसे, उन-उन संदर्भों में हम किसी से प्रोत्सहित न होने पर भी कुछ अच्छे काम करते रहते हैं। वही हमारी संस्कृति है। अब, भगवद्गीता के अंदर के विषयों को हम अपने दैनंदिन जीवन में सहज ही अमल करने पर, वह गीता-संस्कृति बन जाती है। भगवद्गीता में कहे

कुछ विषयों को भक्तलोग करते ही रहते हैं। उदाहरणार्थ, ''मेरा स्मरण करो; मेरा भक्त बनो; मेरा पूजन करो; मुझे प्रणाम करो'' कह कर भगवद्गीता में श्रीकृष्णभगवान् ने कहा है। भक्तलोग उनका भली-भाँति पालन करते हैं; वही गीता-संस्कृति है। लेकिन, श्रीकृष्णभगवान ने गीता में अनेकों विषय कहे थे। उन सबका करने पर ही पूर्ण विजय सिद्ध होगी।

भगवद्गीता में श्रीकृष्णभगवान ने पहले, ''अर्जुन! इस हृदय-दौर्बल्य को छोड़, झट उठो'' बहुत गंभीर ढंग से कहा है। गीता-संस्कृति अपनाने के लिए इस विषय को सब, मुख्यतया युवता को साधन करना चाहिए। यह सूलभतौर पर अपनाये जाने वाला गुण तो है नहीं, मगर दृढ-संकल्प के साथ प्रयत्न करने पर, निश्चय ही वह आदत-सा बन जाता है। तब आप होंगे गीता-संस्कृति में प्रवेशित लोग।

इस प्राथमिक संदेश में श्रीकृष्णभगवान् ने दो बातें कही हैं। एक-हृदय-दौर्बल्य छोड़ना, दूसरा-कार्योन्मुख बन कर उठना। अर्जुन स्थिमित खो कर, दुर्बल बन गया था, जिसने युद्ध करने आये अपने बन्धु-मित्रों से भरी सेना देखी थी। वह खड़ने लायक न बन बैठ गया था। तब भगवान ने अपना प्राथमिक संदेश दिया था, ''हृदय की बल-हीनता छोड़ कर उठ!'' कहते हुए। मतलब इस गीता-संदेश में हमें साखने आवश्यक बात, ''हर आदमी मनोधैर्य से भरना है, कार्योन्मुख बन कर रहे।''

मनुष्य सहज ही भयस्थ बन कर रहता है। भय को प्रयत्न-पूर्वक हटाना चाहित। खासकर युवता को एन्ट्रेन्स परीक्षाएँ, इण्टर्व्यूएँ, सबके सामने बात करना आदि बहुत भय दिलाते हैं। इसका कारण मनोधैर्य का न होना ही है।'' हृदय-दौर्बल्य छोड़ देना'' कह कर भगवान की कही हुई बात बार-बार मुँह के द्वारा बोलना, स्मरण करना, एक कागज पर लिखे सामने वाली दीवार पर चिपक लेना, कम्प्यूटर में टॉइप कर कभी-कभी देखते रहना आदि, उन दुर्गुण को हटाने में सहायक सिद्ध होते हैं। उसके साथ नये लोगों से बात करने का धैर्य होना, किसी भी काम के लिए आगे आना, पैदल चलना आदि कार्यों में फुर्ती बढ़ाना, संदेह होने पर बिन-गुंजाइश के पूछना-जैसे कार्य मनोधैर्य बढ़ाते हैं। इस प्रकार गीता-संदेश में वही बातों का पालन करना ही गीता-संस्कृति है। इसके द्वारा डाला हुआ कदम ही जीवन में अनेकों पड़ावों को लाँघ कर, वांछित गम्य पर पहुँचाता है। साल में केवल पाँच-छः गीता-संदेशों की जीवन में अमल करने पर, ऐसी गीता-संस्कृति के द्वारा जीवन में कांति-रेखाओं का भर जाना तथ्य है। युवता को इस अनुभव के लिए कमर कसना चाहिए। शुभमस्तु! विजयोस्तु!!

श्री वेंकटेश्वर परब्रह्मणे नमः

हिन्दू होने के नाते गर्व कीजिए!

* ललाट पर अपने इच्छानुसार (चंदन, भस्म, नामम्, कुंकुम) तिलक का धारण करें।
* नहाने के बाद निम्न भगवन्नामों में से किसी एक का एक पर्याय में १०८ बार जप करें।

श्री वेंकटेशाय नमः।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो नारायणाय।

श्री वेंकटेश सुप्रभात

स्तोत्र रचना - श्री प्रतिवादि भयंकर अण्णा स्वामीजी

व्याख्या - श्री यू.वी.पी.बी.श्रीनिवासाचार्यजी

मोबाइल - ९३६४३२४८४४

तन्त्रीप्रकर्षमधुरस्वनया विपञ्चया
गायत्यनन्तचरिते तव नारदोऽपि।
भाषासमग्रमसकृत्करचाररम्यं
शेषाद्रिशेखर विभो तव सुप्रभातम् ॥९॥

पदार्थ -

नारदः आपि - नादरजी भी,

भाषा समग्रम् - संस्कृत भाषामय,

तव अनन्त चरितं - आपके सीमातीत वीर चरित्र को,

तन्त्री प्रकर्ष - (तारों को खसकर) स्वर में मिलाने से (तम्बूरे के स्वर से मिलाकर)

मधुरस्वनया - मधुर ध्वनि युक्त,

विपञ्चया - सात तन्त्रीवाली वीणा के साथ,

असकृत् कर चार रम्यं - बार-बार अंगुलियों को फिराने से (अंगुलियों से बजाने से) मधुर (जैसा हो वैसा),

गायति - गाते हैं (शेषाद्रि.... सुप्रभातम्)

भावार्थ - नारदजी वीणा को अपनी अंगुलियों से बजाते आपके चरितों को अपने मुख से भी गाते। श्री शेषाद्रि के भूषण हे नाथ आपको यह सुप्रभात है।

विशेषार्थ - श्री भक्तांघ्रिरेणुसूरि के 'तिरुप्पल्लियेलुच्चि' (सुप्रभात) प्रबन्ध की आठवी गाथा की छाया है यह श्लोक। विद्या का फल कैंकर्य है। नारदजी अपने संगीत साहित्य ज्ञान तथा वीणावादन के सामर्थ्य को, भगवत्कैंकर्य में विनियुक्त हो, इस भावना से संस्कृत भाषामय भगवान के गानों को वीणावादन के साथ गाते हैं। (उस गान का वीणा में बजाते)। संगीत विद्वान लोग (गाने में) अपने सामर्थ्य को दिखाकर (राजा से) पारितोषिक प्राप्त करते हैं, ऐसा नहीं है। ये स्वभाव से विरक्त हैं, सकलकलावल्लभ श्रीवेंकटेशजी को अपने सीमित सामर्थ्य को नहीं दिखायेंगे। वह संगत भी नहीं। श्रीकृष्ण के वेणुगान से परवश होकर नारदजी ने अपने वीणागान को भूलकर जिस स्थिति को प्राप्त किया है, उस स्थिति को पेरियाल्वार (श्री विष्णुचित्तसूरि) अपने प्रबन्ध में (३-६-५) वर्णनकरते हैं। वह जानने योग्य है।

अपस्वर न होने पावे, इसलिए तन्त्री को खसकर (खींचकर) बाँधना चाहिए, अतः यहाँ 'प्रकर्ष' कहा गया है। ''नारं द्यति'' - मनुष्य के अज्ञान को कोसते हैं (नाश करते हैं।) 'नारं ददाति' - नाश कर देते हैं। (नष्ट कर देते हैं) (अज्ञान को) यह 'नारद' शब्दार्थ है। श्रीमन्नारायण के वैभव को गाते जाकर उनके भगवद्विषय में रहे अज्ञान को दूर कर

ज्ञान को प्रदान करते हैं। इस कारण से इनको यह नाम हुआ ॥९॥

भृङ्गावली च मकरन्दरसानुविद्ध -
झंकारगीतनिनदैः सह सेवनाय ।
निर्यात्युपान्तसरसीकमलोदरेभ्यः
शेषाद्रिशेखरविभो तव सुप्रभातम् ॥१०॥

पदार्थ -

भृंग आवली च - भंवरों की कतार,

मकरन्द रस अनुविद्ध - मधु (शहद) के पीने से हुए आनन्द से यक्त,

झंकार गीत निनदैः सह - झंकार रूप गान ध्वनि से सहित,

उपान्त सरसी - समीप के तालाबों में रहे,

कमल उदरेभ्यः - कमल पुष्पों के मध्य भाग से (अन्दर से),

सेवनाय - आप के सेवार्थ,

निर्याति - बाहर निकलते हैं, शेषाद्रिशेखर विभो तव सुप्रभातम्।

भावार्थ - हे शेषाद्रि के नाथ! समीप में रहे तटाको में (तालाबों में) विकसित कमल पुष्पों के मधु पीकर आनंदित हुए भँवरे, आपकी सेवा करने के लिए एक श्रृंखला से बाहर निकलते हैं। आपको यह सुप्रभात हो।

विशेषार्थ - भँवरे तटाक में रहे कमल पुष्पों के मधु को पीकर, उससे भी श्रेष्ठ मधु आप भगवान को, नेत्रों से पीने के लिए, नारदजी जैसे गाते हुए आते हैं। भँवर आदि तिर्यक जाति के हैं, उनको भगवज्ज्ञान कैसे हो सकता है? इस शंका का यही समाधान है कि श्रीवेंकटाद्रि को प्राप्त होते ही उन तिर्यकों को भी ज्ञान उत्पन्न होगा। इस प्रकार के विवरण का मूल श्रीभक्तिसारमुनि की (नान्मुखन् तिरुवन्तादि-४६) चतुर्मुखान्तादि श्रीसूक्ति है।

नारदजी, मुनिवाहन - भक्तांघ्रिरेणुसूरि उनके जैसे दिव्य सूरियों को भँवर आदि कहा जा रहा है। भँवर (मकरन्द के) सारग्राही होते हैं। वैसे ये लोग सारग्राही (भँवर) हैं। इनके जैसा ही श्रीमद्वरमुनीन्द्रजी जैसे महान आचार्य सारग्राही होते हैं। उनके हृदय में जमे मधु भगवान को, पहले दिन की रात्रि से लेकर भोर तक अनुभव कर आनन्दित होकर झंकार (नाद) जैसे ''हरिःहरिः'' आदि भगवन्नामों को गाते हैं। (भगवन्नामसंकिर्तन झंकार है)

उपान्तसरसी कमलोदरेभ्यः इस शब्द से समीप में रहे ''स्वामिपुष्करिणी'' आदि के तीर्थों के मध्य भाग को सूचित कर, 'सेवन' शब्द से सामने प्रत्यक्ष दर्शन दे रहे श्री वेंकटेश्वररूप मधु का पान करते हैं। इसे भी सूचित कर यह बताता है कि दास के आचार्य श्रीवरवरमुनींद्र जैसे महापुरुष अब तक अन्तर्यामी का अनुभव करते गाते (चलकर) तटाक में स्नान कर, वहाँ से आपके दर्शनार्थ पधार रहे हैं। यह (भाव) भी समुचित है। इस विवरण में कमल का अर्थ, 'सलिलं कमलं जलम्' इस अमरकोश के आधार पर, तीर्थ (जल) होता है। ध्वन्यर्थ (व्यङ्ग्य) प्रणाली से ऐसा भाव प्रकट होता है जिसको 'स्वापदेशार्थ' भी कहते हैं ॥१०॥

योषागणेन वरदध्नि विमथ्यमाने

घोषालयोषु दधिमन्थन तीव्रघोषाः

रोषात् कलिं विदधते ककुभश्च कुम्भाः

शेषाद्रिशेखरविभो तव सुप्रभातम् ।।११।।

पदार्थ -

घोष आलयेषु - गोकुल (व्रज) के घरों में,

योषा गणेन - स्त्रियों के समूह से,

वरदध्नि - श्रेष्ठ दही के,

विमथ्यमाने सति - मथने के समय में,

दधि मंथन तीव्र घोषाः - दही के मंथन से हुई तीव्र ध्वनि युक्त,

कुम्भाः - दही के भाण्डे,

ककुभः च - दिशाएँ भी,

रोषात् - क्रोध से,

कलिं विदधते - स्पर्धा (झगड़ा) करते हैं (ऐसा भान होता है) शेषाद्रि... सुप्रभातम्।

भावार्थ - खालिनियों के अपने घर में दही के मथने से हुए महान ध्वनि की दिशाओं (जाकर) में प्रतिध्वनि जो होती हैं, उससे यह प्रतीत होता है कि दही के भाण्डे व दिशाएँ क्रोध से परस्पर वाग्युद्ध करते हैं। हे शेषाद्रिनाथ आपको यह सुप्रभात हो।

विशेषार्थ - यह श्लोक श्री गोदाम्बाजी के तिरुप्पावै (श्रीव्रत) प्रबंध के ७ वाँ पाशुर, उद्गायतीनां (श्रीभाग-१०-४६-४७) इस श्लोक की छाया में रचित है। दही के मथने से हुई ध्वनि भाण्डे से निकलकर दिशाओं में प्रतिध्वनित होकर ऐसा परस्पर वाद करते हैं। इससे ऐसा लगता है कि (उपनिषद) के भल्ल, भल्लाक्ष नामक दो हंस परस्पर विवाद कर जनश्रुति को वेदान्त ज्ञान सम्पादन के लिए जैसा प्रबोधित करते हैं, वैसा ये दोनों परस्परवाद से ऊपर के स्वर्गादि लोक में स्थित इन्द्रादि देवताओं को ''परमपदनाथ श्री वेंकटेशजी के (अर्चा) रूप में अवतरित हुए हैं। उनके वात्सल्यादि गुणों को लोग लूट-लूटकर यहाँ अनुभव करते हैं, तो आप लोगों को ऊपर क्या काम है? जल्दी से उतरकर आप भी (वात्सल्यादिगुणों को) अनुभव करें'', ऐसा प्रबोधित (समझाते) करते हैं। इस श्लोक में रहे 'च' कार को 'विदधते' के साथ संयुक्त कर 'प्रबोधित' करते हैं इस क्रिया को, जो यहाँ शब्दतः नहीं कहा गया है, समुच्चय करते हैं। ऐसा मानकर (इस अभिप्राय से) यह विवरण दिया गया है ।।११।।

क्रमशः

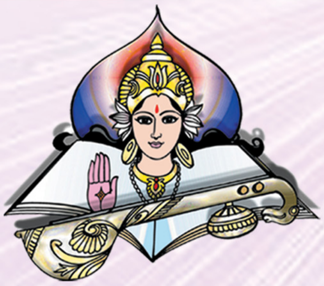

आइये, संस्कृत सीखेंगे..!!

लेखक - महामहोपाध्याय काशिकृष्णाचार्य

हिन्दी में निर्वहण - डॉ.सी.आदिलक्ष्मी

आयोजक - महामहोपाध्याय समुद्राल लक्ष्मणय्या

मोबाइल - ९९४९८७२१४९

तृतीयः पाठः = तीसरा पाठ

१. एषः तदा कुत्र आसीत्?	१. यह तब कहाँ था?
२. सः तदा अत्र नासीत्।	२. वह तब यहाँ नहीं था
३. त्वं कुत्र आसीः	३. आप कहाँ हो
४. अहं तत्रासम्	४. मैं वहाँ मौजूद हूँ
५. कः तत्रासीत्?	५. कौन कहाँ था?
६. वयं तत्र न स्मः।	६. हम वहाँ नहीं हैं
७. ते तत्र न सन्ति।	७. वे वहाँ नहीं थे।
८. बत सः तत्रास्ति वा	८. काश वह वहाँ होता
९. एषः तत्र नास्ति वा	९. यह वहाँ नहीं था?
१०. सर्वः तत्रास्ति।	१०. सब लोग थे।

१. त्वं तदा कुत्र आसीः?	१. तुम फिर कहाँ हो?
२. अहं तदा तत्र आसम्	२. जब मैं वहाँ मौजूद हूँ
३. बत ते तत्र सन्ति वा?	३. काश वे वहाँ नहीं होते।
४. अहं अत्र नासम्	४. मैं यहाँ नहीं मौजूद हूँ।
५. सः कः?	५. वह कौन है?
६. त्वं कः ?	६. तुम कौन हो?
७. त्वं इदानीं कुत्र असि?	७. तुम अभी कहाँ हो?
८. ते अत्र सन्ति वा?	८. वे यहाँ नहीं थे?
९. यूयं इदानीं कुत्र स्थ?	९. आप अभी कहाँ रहे हैं?
१०. वयं इदानीं अत्र न स्मः	१०. हम अभी यहाँ नहीं हैं

एषः = यह

वा = या

आसीत् = था

कः = कौन

न = नहीं

आसीः = हो

सर्वः = सब

बत = कितना

आसम् = मौजूद हूँ

अतिथि सत्कार - एक पुण्य कार्य

श्री सी.सुधाकर रेड्डी
मोबाइल - ९८६६०६०२६९

यह कथा पुराण काल की है। उस समय चिड़ियों को फँसा कर उन्हें बेचनेवाला एक बहेलिया था। वह दिन भर अपना गोद लगा बांस लिए वन में घूमता था और चिड़ियों को फँसाया करता था। एक बार सर्दी के दिनों में बहेलिया बडे सवेरे जंगल से दूसरे जंगल में भटकते हुए उसे पूरा दिन बीत गया। वह इतनी दूर निकल गया था कि घर नहीं लौट सकता था। अंधेरा होने पर एक पेड़ के नीचे रात बिता देने के विचार से वह बैठ गया। उस दिन वर्षा हुई थी। बहेलिये के पास कपड़े नहीं थे। वह जंगल में रात बिताने की बात सोचकर घर से नहीं निकला था। हवा जोर से चलने लगी। बहेलिया थर-थर कांपने लगा, जाडे के मारे उसके दांत कट-कट बजने लगे। जिस पेड़ के नीचे बहेलिया बैठा था, उस पेड़ के ऊपर कबूतर का एक जोड़ा घोंसला बनाकर रहता था। बहेलिया की दुर्दशा देखकर कबूतर ने अपनी कबूतरी से कहा - ''यद्यपि यह हम लोगों का शत्रु है, किंतु आज हमारे यहाँ अतिथि के रुप में आया हुआ है। सेवा करना हम लोगों का धर्म है। अभी तो रात प्रारंभ हुई हैं, जाड़ा अभी बढेगा। यदि इसे ऐसे ही रहना पडा तो रात भर में यह जाडे के मारे मर जाएगा। हम लोगों को इसकी मृत्यु का पाप लगेगा। इसका जाड़ा दूर करने का उपाय करना चाहिए।''

कबूतरी और कबूतर ने अपना घोंसला नीचे गिरा दिया। थेडें और तिनके चोंच में दबा-दबा कर लाकर गिराये। फिर कबूतरी उड़ गई और दूर से एक जलती लकड़ी चोंच में पकड़कर ले आयी। उस लकड़ी को उसने तिनकों पर डाल दी, तिनके जलने लगे। बहेलिया ने आसपास से इकट्ठा करके और लकडियाँ आग में डाल दीं। उसका जाड़ा दूर हो गया।

बहेलिया दिन भर भूखा था। वह अग्नि के प्रकाश में इधर-उधर देखने लगा कि कहीं कुछ मिल जाए तो खाकर भूख मिटावे। उसका मुख भूख से सूख रहा था। कबूतरी ने यह देखा तो वह कबूतर से बोली- ''अतिथि देवोभव'' इसका अर्थ यह है कि अतिथि साक्षात् भगवान का स्वरूप होता है। जिस के घर से अतिथि भूखा चला जाता है, उसके सब पुण्य नष्ट हो जाते हैं। यह बहेलिया आज हमारा अतिथि है। यह भूखा है। इसकी भूख मिटाने को हमारे पास कुछ नहीं है, मैं इस जलती आग में कूदती हूँ, जिससे मेरा मांस खाकर यह अपना पेट भर ले।'' कबूतरी इतना कहकर पेड़ से अग्नि में कूद पड़ी। कबूतर ने अपने मन में कहा- ''इस अतिथि का पेट कबूतरी के थोडे से मांस से कैसे भरेगा। मैं भी आग में कूदकर अपना मांस इसे दूंगा।'' कबूरत भी आग में कूद पड़ा। उसी समय आकाश में बाजे-बजने लगे। फूलों की वर्षा होने लगी। देवताओं का विमान उतरा और उस में बैठकर देवताओं के समान रूप धारण करके कबूतर और कबूतरी उस दिव्य लोक को चले गए, जहाँ बडे-बडे यज्ञ करनेवाले राजा तथा बड़े-बड़े ऋषि-मुनि भी बड़ी कठिनाई से पहुँच पाते हैं।

"मातृ देवो भव। पितृ देवो भव।
आचार्य देवो भव। अतिथि देवो भव।।"

इसका अर्थ यह है कि माता, पिता, आचार्य एवं अतिथि भगवान के समान हैं। इसलिए हम सब को इस दुनिया में माता को, पिता को, आचार्य एवं अतिथि को दैव के समान मानना है और उनकी सेवा करनी है। पुराने जमाने में घर पर आए हुए अतिथियों का सम्मान एवं देखभाल अच्छी तरह करते थे। आजकल की दुनिया में व्यस्थता एवं कामकाजी होने के कारण अतिथि की देखभाल करने में दिक्कत हो रही है। लेकिन हमें इस से चिता नहीं करनी है, जब अतिथि की सेवा करने का मौका मिलता है, तब उनकी सेवा करनी है। अतिथि सत्कार को एक पुण्य एवं पवित्र कार्य के रुप में आप जैसे बच्चों को मानना चाहिए। तद्वारा आप को बड़ों-द्वारा आशीर्वाद एवं शुभकामनाएँ प्राप्त होती हैं।

नीतिः अतिथि सत्कार एक पुण्य एवं पवित्र कार्य है।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

तिरुमल यात्री इनका आचरण न करें, तो अच्छा होगा।

- ☒ अपने साथ कीमती आभूषण या अधिक नकद न रखें।
- ☒ भगवान के दर्शन के लिए मात्र ही तिरुमल पधारें, अन्य किसी उद्देश्य से नहीं।
- ☒ दर्शन के लिए जल्दबाजी न करें, क्यू लाइन में ही सक्रम जाने का प्रयत्न करें।
- ☒ मंदिर के आचार-व्यवहारों के अनुरूप मंदिर में प्रवेश निषिद्ध है, तो कृपया मंदिर को न आवें।
- ☒ तिरुमल में सभी फूल भगवान की पूजा के लिए है इसलिए पुष्पों का धारण न करें।
- ☒ पानी और बिजली को वृथा न करें।
- ☒ अपरिचितों को काटेज में प्रवेश न दें। चाबियों को उन्हें न सौंपें।
- ☒ पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रिक थैलियों के अलावा किसी अन्य प्लास्टिक थैलियों का उपयोग न करें।
- ☒ चार माडावीथियों में चप्पल धारण न करें।
- ☒ भगवान दर्शन और आवास के लिए धोखेबाज या दलाल से संपर्क न करें।
- ☒ फेरीवालों से नकली प्रसाद मत खरीदें।
- ☒ तिरुमल मंदिर के परिसरों में थूकना आदि असह्य कार्य न करें।
- ☒ सेलफोन, कैमेरा जैसी चीजें और आयुधों को मंदिर के अंदर न ले जायें।
- ☒ विविध राजकीय कार्यकलाप, सभायें, ब्यानर, रास्तारोक, हडताल आदि सप्तगिरियों पर निषेधित है।

तिरुमल में निषेधित कार्य

- 🚫 तिरुमल में धूम्रपान, शराब, मांसाहार आदि निषेधित हैं।
- 🚫 अन्य मतों का प्रचार न करें।
- 🚫 पशु, पक्षी का वध निषेधित है।
- 🚫 तिरुमल में जुआ, पासा आदि को खेलना या अन्य खेलों में धन को बाजी लगाना निषेधित है।
- 🚫 भिखमंगों का प्रोत्साहन न करें।
- 🚫 तिरुमल में प्रईवेट व्यक्तियों द्वारा केशखंडन या कल्याणकट्टाओं (क्षुरकशाला) को चलाना निषेधित है।
- 🚫 आवास को अनधिकारिक तौर पर देना या लेना मना किया गया है।

श्री गोदा कल्याण

चित्रकथा

तेलुगु में - श्री डी.श्रीनिवास दीक्षितुलु
हिन्दी में - डॉ.एम.आर.राजेश्वरी
चित्र - श्री के.तुलसीप्रसाद

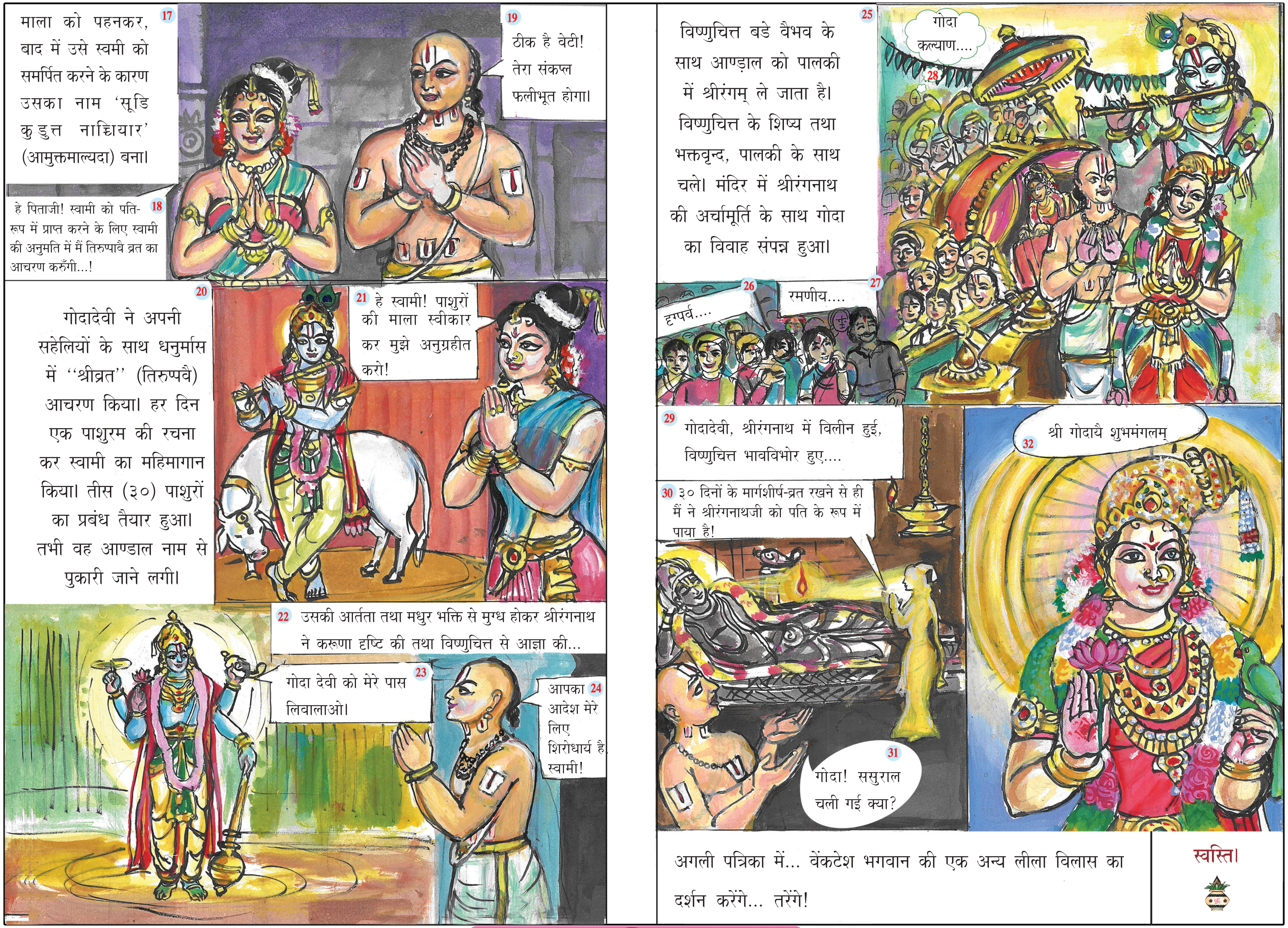
17 माला को पहनकर, बाद में उसे स्वमी को समर्पित करने के कारण उसका नाम 'सूडि कुडुत्त नाच्चियार' (आमुक्तमाल्यदा) बना।
18 हे पिताजी! स्वामी को पति-रूप में प्राप्त करने के लिए स्वामी की अनुमति में मैं तिरुप्पावै व्रत का आचरण करुँगी...!
19 ठीक है बेटी! तेरा संकप्ल फलीभूत होगा।
20 गोदादेवी ने अपनी सहेलियों के साथ धनुर्मास में ''श्रीव्रत'' (तिरुप्पवै) आचरण किया। हर दिन एक पाशुरम की रचना कर स्वामी का महिमागान किया। तीस (३०) पाशुरों का प्रबंध तैयार हुआ। तभी वह आण्डाल नाम से पुकारी जाने लगी।
21 हे स्वामी! पाशुरों की माला स्वीकार कर मुझे अनुग्रहीत करो!
22 उसकी आर्तता तथा मधुर भक्ति से मुग्ध होकर श्रीरंगनाथ ने करुणा दृष्टि की तथा विष्णुचित्त से आज्ञा की...
23 गोदा देवी को मेरे पास लिवालाओ।
24 आपका आदेश मेरे लिए शिरोधार्य है, स्वामी!
25 विष्णुचित्त बडे वैभव के साथ आण्ड़ाल को पालकी में श्रीरंगम् ले जाता है। विष्णुचित्त के शिष्य तथा भक्तवृन्द, पालकी के साथ चले। मंदिर में श्रीरंगनाथ की अर्चामूर्ति के साथ गोदा का विवाह संपन्न हुआ।
26 हृप्पर्व....
27 रमणीय....
28 गोदा कल्याण....
29 गोदादेवी, श्रीरंगनाथ में विलीन हुई, विष्णुचित्त भावविभोर हुए....
30 ३० दिनों के मार्गशीर्ष-व्रत रखने से ही मैं ने श्रीरंगनाथजी को पति के रूप में पाया है!
31 गोदा! ससुराल चली गई क्या?
32 श्री गोदायै शुभमंगलम्
अगली पत्रिका में... वेंकटेश भगवान की एक अन्य लीला विलास का दर्शन करेंगे... तरेंगे!
स्वस्ति।

'क्विज'

आयोजक - डॉ.जी.मोहन नायुडु

१) गांधारी के भाई और दुर्योधन के मामा का नाम क्या है?
अ) परशुरमा आ) एकलव्य इ) शकुनि ई) नल

२) 'आयुर्वेद' के आदि आचार्य किसको माना जाता है?
अ) अश्विनी कुमार आ) वसु इ) इन्द्र ई) रुद्र

३) 'परशुराम' का अस्त्र कौन-सा है?
अ) परशु आ) साँप इ) वज्र ई) कनक

४) रावण की पत्नी का नाम क्या है?
अ) कैकेई आ) मंदोदरी इ) मालिनी ई) सुरसा

५) रामायण में लक्ष्मण की पत्नी का नाम क्या है?
अ) तारा आ) श्रुतकीर्ति इ) ऊर्मिला ई) शूर्पणखा

६) राजा दशरथ की पहली रानी का नाम क्या है?
अ) सुमित्रा आ) शांता इ) कैकेई ई) कौसल्या

७) 'रामायण' में 'संपाति' क्या है?
अ) कीट आ) मनुष्य इ) पक्षी ई) नदी

जवाब
१) इ २) अ ३) अ ४) आ ५) इ ६) ई ७) इ

चित्रलेखन

इस चित्र को रंगों से अब भरें क्या?

ऊपर सूचित चित्र को नीचे के डिब्बों में खींचिये -

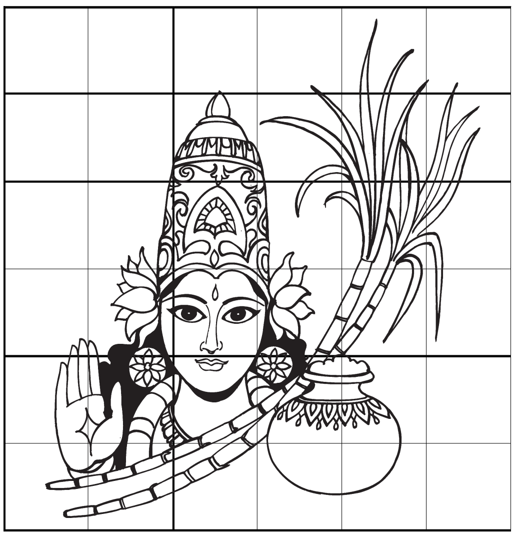

Edited and Published on behalf of T.T.Devasthanams by **Prof.K.Rajagopalan,** Ph.D., Chief Editor, T.T.D. and Printed at T.T.D. Press by **Sri P.Ramaraju,** M.A., Special Officer (Press & Publications), T.T.D. Press, Tirupati-517 507.

धनुर्मास के अवसर पर तिरुमल श्रीश्रीश्री बड़े-जीयरस्वामीजी के समक्ष में श्री गोदादेवी के रचित 'तिरुप्पावै' प्रवचन कार्यक्रम में भाग लेते हुए श्रीश्रीश्री चिन्न जीयर स्वामीजी, ति.ति.दे. के अतिरिक्त-कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री ए.वी.धर्मारेड्डिजी का भाग लिया हुआ दृश्य 'तिरुप्पावै' के प्रवचित आल्वार दिव्य-प्रबंध प्रॉजेक्ट प्रत्येकाधिकारी श्री के.राजगोपालन जी

तिरुपति के अन्नमाचार्य के कलामंदिर में १५-१२-२०२० पर 'तिरुप्पावै' प्रवचन कार्यक्रम को शुरुआत करनेवाले तिरुपति संयुक्त कार्यनिर्वहणाधिकारी श्रीमती सदाभार्गवी जी, आई.ए.एस., इतर ति.ति.दे. के उन्नताधिकारी

तिरुमला में २७-१२-२०२० पर पधारे आन्ध्रप्रदेश हॉई-कोर्ट प्रधान न्यायाधीश जस्टिस श्री जे.के.महेश्वरि जी को तिरुमला के अतिरिक्त कार्य-निर्वहणाधिकारी श्री ए.वी.धर्मारेड्डीजी के द्वारा श्रीवारि के कैलेंडर, डॉयरी समर्पित करने का दृश्य

तिरुमला में २४-१२-२०२० पर पधारे भारत प्रधान न्यायाधीश जस्टिस श्री अरविंदबाब्डेजी को श्रीवारि का चित्रपट बहूकरित ति.ति.दे. अध्यक्ष श्री वॉई.वी.सुब्बरेड्डि, ति.ति.दे., कार्य-निर्वहणाधिकारी डॉ.के.एस.जवहररेड्डि जी, आई.ए.एस.

दिल्ली श्रीवेंकटेश्वर कलाशाला में २९-१२-२०२० पर नूतन भवनों के शुरुआत ति.ति.दे. के अध्यक्ष श्री वॉई.वी.सुब्बारेड्डी, ति.ति.दे. कार्य-निर्वहणाधिकारी डॉ.के.एस.जवहररेड्डी, आई.ए.एस., ति.ति.दे. के वित्तीय सलाहकार और मुख्य गणांकाधिकारी श्री ओ.बालाजी, न्यास-मंडली की सदस्या श्रीमती वेमिरेड्डी प्रशांती, डॉ.मुप्पुवरपु निश्चिता, श्री डी.पी.अनंता और श्री राकेश सिन्हा ने भाग लिया।

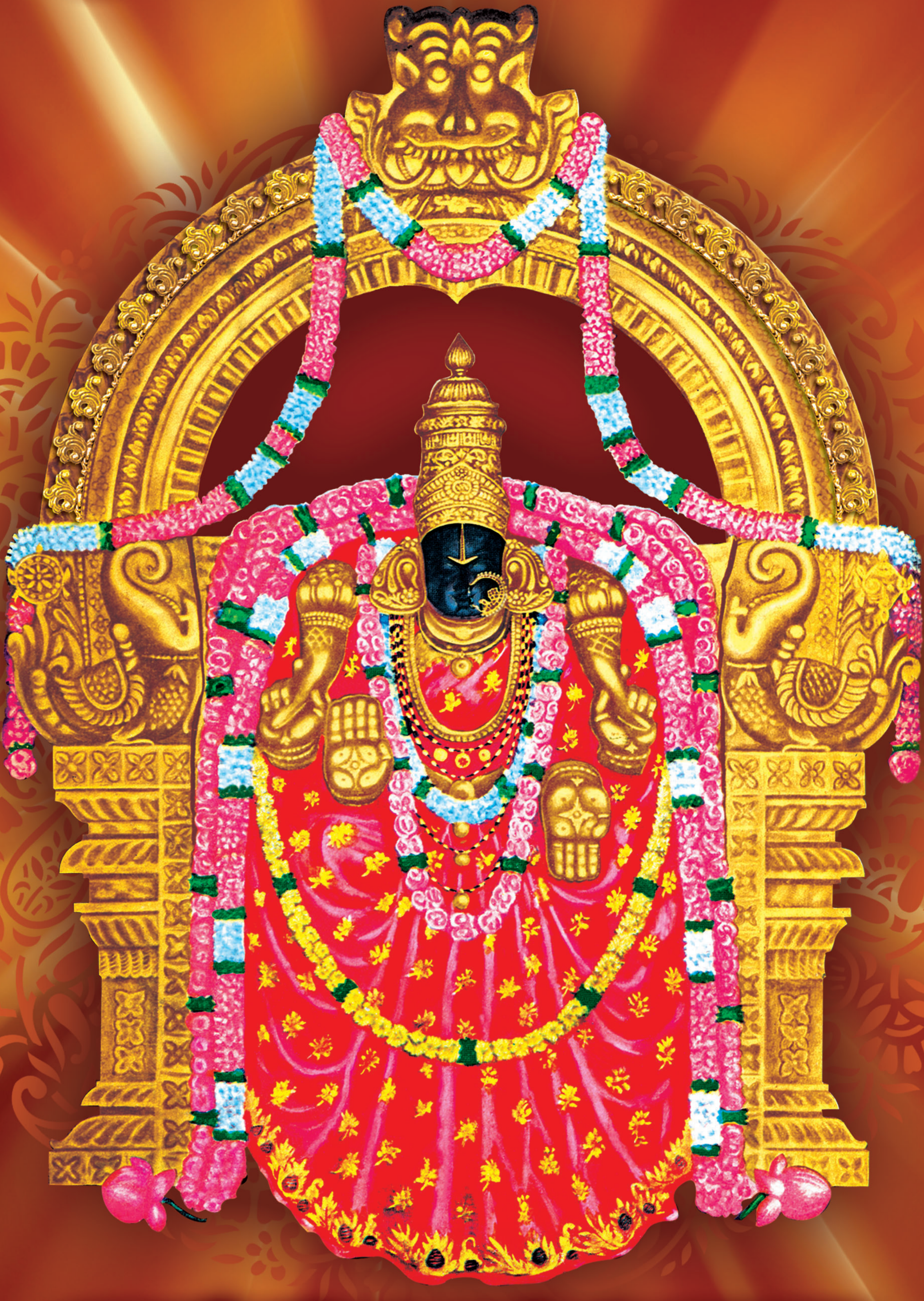

“वत्सल्यादि गुणोज्ज्वलां भगवतीं वन्दे जगन्मातरम्”